

# संस्कृत साहित्य : कथा-काव्य (Sanskrit Literature: Katha Kavya)

बी.ए. (प्रोग्राम) संस्कृत

सेमेस्टर – VI

DISCIPLINE SPECIFIC CORE COURSE (DSC)  
MINOR PAPER

As per the UGCF - 2022 and National Education Policy 2020

सीमित प्रसार हेतु



दूरस्थ एवं सतत शिक्षा विभाग  
मुक्त शिक्षा परिसर, मुक्त शिक्षा विद्यालय  
दिल्ली विश्वविद्यालय



## सीमित प्रसार हेतु

### संपादक मंडल

डॉ. प्रवीण ममगाई, श्री विष्णु प्रसाद सेमवाल, डॉ. ओम प्रकाश

### पाठ्य-सामग्री लेखक

डॉ. ओम प्रकाश, डॉ. प्रवीण ममगाई, श्री विष्णु प्रसाद सेमवाल

### शैक्षणिक समन्वयक

दीक्षांत अवस्थी

## दूरस्थ एवं सतत शिक्षा-विभाग

ई-मेल : ddceprinting@col.du.ac.in  
sanskrit@col.du.ac.in

### प्रकाशक :

दूरस्थ एवं सतत शिक्षा विभाग  
मुक्त शिक्षा परिसर, मुक्त शिक्षा विद्यालय  
दिल्ली विश्वविद्यालय-110007

### मुद्रक :

मुक्त शिक्षा विद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय



**समीक्षक**

श्री विष्णु प्रसाद सेमवाल,

डॉ. ओम प्रकाश,

डॉ. प्रवीण ममगाई

- स्व-शिक्षण सामग्री (एस.एल.एम.) में वैधानिक निकाय, डीयू/हितधारकों द्वारा प्रस्तावित सुधार/संशोधन/ सुझाव अगले संस्करण में शामिल किए जाएँगे। हालाँकि, ये सुधार/संशोधन/सुझाव वेबसाइट <https://sol.du.ac.in> पर अपलोड कर दिए जाएँगे। कोई भी प्रतिक्रिया या सुझाव ईमेल- [feedbackslm@col.du.ac.in](mailto:feedbackslm@col.du.ac.in) पर भेजे जा सकते हैं।



## SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

### संस्कृत साहित्यः कथा-काव्य

Syllabi	Mapping in Book
<b>Unit-I:</b> Panchatantram: Aparikshitakarakam (पंचतन्त्रम्: अपरीक्षितकारकम्), Kshapanakakatha (क्षपणककथा), Brahmaninakulkatha (ब्राह्मणीनकुलकथा), Lobhavishta-Chakradharkatha (लोभाविष्टचक्रधरकथा)	<b>पाठ 1 :</b> क्षपणककथा (पृष्ठ 3-22) <b>पाठ 2 :</b> ब्राह्मणी-नकुलकथा (पृष्ठ 23-30) <b>पाठ 3 :</b> लोभाविष्टचक्रधरकथा (पृष्ठ 31-45)
<b>Unit-II:</b> Sinha-Karakabrahmankatha (सिंहकारकब्राह्मणकथा) Murkha-brahmanakatha (मूर्खब्राह्मणकथा) Matsyamandukkatha (मत्स्यमण्डूककथा) Rashabhashrigālakatha (रासभशृगालकथा)	<b>पाठ 4 :</b> सिंहकारकब्राह्मण कथा (पृष्ठ 49-55) <b>पाठ 5 :</b> मूर्खब्राह्मणकथा (पृष्ठ 57-66) <b>पाठ 6 :</b> मत्स्यमण्डूककथा (पृष्ठ 67-75) <b>पाठ 7:</b> रासभ-शृगाल-कथा (पृष्ठ 77-86)
<b>Unit-III:</b> Hitopdesah : Mitralabhah (हितोपदेशः : मित्रलाभः) Vriddhavyagraha-Lubdhapathikakatha (वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा)	<b>पाठ 8 :</b> हितोपदेश : मित्रलाभः (वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा) (पृष्ठ 89-98)
<b>Unit-IV:</b> Tradition of Kathakavya in Sanskrit Literature (संस्कृतसाहित्य में कथाकाव्य की परम्परा) Origin and Development of Kathakavya (कथाकाव्य का उद्भव और विकास) Panchtantra, Hitopdesa, Kathasaritsagar, Vetālpānchavimsatikā, Simhasanadwātrimsikā and Purusaparīkṣhā (पंचतन्त्र, हितोपदेश, कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वात्रिंशिका और पुरुषपरीक्षा)	<b>पाठ 9 :</b> संस्कृत साहित्य में कथा काव्य की परम्परा (पृष्ठ 101-108) <b>पाठ 10 :</b> नीति कथा साहित्य - पञ्चतन्त्र एवं हितोपदेश (पृष्ठ 109-128) <b>पाठ 11 :</b> नीति साहित्य- कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वात्रिंशिका, पुरुषपरीक्षा (पृष्ठ 129-138)



## विषय-सूची

### इकाई-1

पाठ 1	क्षपणककथा	3-22
पाठ 2	ब्राह्मणी-नकुलकथा	23-30
पाठ 3	लोभाविष्टचक्रधरकथा	31-45

### इकाई-2

पाठ 4	सिंहकारकब्राह्मण कथा	49-55
पाठ 5	मूर्खब्राह्मणकथा	57-66
पाठ 6	मत्स्यमण्डूककथा	67-75
पाठ 7	रासभ-शृगाल-कथा	77-86

### इकाई-3

पाठ 8	हितोपदेश : मित्रलाभः (वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा)	89-98
-------	--	-------

### इकाई-4

पाठ 9	संस्कृत साहित्य में कथा काव्य की परम्परा	101-108
पाठ 10	नीति कथा साहित्य - पञ्चतन्त्र एवं हितोपदेश	109-128
पाठ 11	नीति साहित्य- कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वित्रिंशिका, पुरुषपरीक्षा	129-138

---

## इकाई-1

---

पाठ 1 क्षपणककथा

पाठ 2 ब्राह्मणी-नकुलकथा

पाठ 3 लोभाविष्टचक्रधरकथा





## क्षपणककथा

**डॉ. ओम प्रकाश**

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,  
डी.डी.सी.ई., सी.ओ.एल., एस.ओ.एल.,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

### संरचना

- 1.1 अधिगम के उद्देश्य
- 1.2 प्रस्तावना
- 1.3 कथामुख
- 1.4 क्षपणक-नापित प्रकरण
- 1.5 कथान्त
- 1.6 सारांश
- 1.7 कठिन शब्दावली
- 1.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 1.9 अभ्यास प्रश्न
- 1.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 1.11 सहायक अध्ययनसामग्री

### 1.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप-

- क्षपणक-कथा को शब्दशः जानेंगे।
- संस्कृत कथा-साहित्य की कथाशैली से परिचित होंगे।
- यह बताने में सक्षम होंगे कि अपरीक्षितकारक नाम के तन्त्र में क्षपणक कथा को सम्मिलित करने का क्या कारण है?
- क्षपणक-कथा के सन्देश की दैनिक जीवन में व्यावहारिक उपयोगिता पर चिन्तन व विश्लेषण करने में सक्षम बनेंगे।





टिप्पणी

## 1.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! आप कथा-कहानियाँ तो बाल्यकाल से सुनते ही आये हैं। तब दादी-नानी से जो कथाएँ सुनी होंगी उनका स्मरण अब भी होगा। स्मरण रहेगा भी क्यों नहीं, जब कथा काव्य की एक विधा ही इतनी रोचक है कि मन करता है और नई कहानी सुनें। आपने जो भी कहानियाँ सुनी होंगी उनमें से अनेक कहानियाँ पञ्चतन्त्र नामक ग्रन्थ में मिल सकती हैं।

वैसे पञ्चतन्त्र नामक कथा ग्रन्थ का विस्तृत परिचय आपके पाठ्यक्रम की चौथी इकाई में है जिसका लेखन इस पुस्तक के अन्तिम भाग में दिया गया है। किन्तु यहाँ इतना जान लेते हैं कि पञ्चतन्त्र को ग्रन्थन की दृष्टि से पाँच तन्त्रों (भागों) में विभाजित किया गया है।

उन पाँच तन्त्रों के नाम हैं- मित्रभेद, मित्रलाभ, सन्धि-विग्रह, लब्धप्रणाश व अपरीक्षितकारक। इनमें से अन्तिम तन्त्र 'अपरीक्षितकारक' में जो कहानियाँ संग्रहित हैं उनका सन्देश है- 'उचित परीक्षा करके ही कोई कार्य करना चाहिए न कि बिना परीक्षा किये'। आपके इस सत्र के पाठ्यक्रम में इस तन्त्र से सात कहानियाँ सम्मिलित हैं जिनमें से प्रथम है- क्षपणकनापित कथा। इस कथा की आगे चर्चा की गई है।

## 1.3 कथामुख

**अथेदमारभ्यतेऽपरीक्षितकारकं नाम पञ्चमं तन्त्रम् । तस्यायमादिमः श्लोकः**

**हिन्दी अनुवाद-** पूर्व में जो बताया गया है (लब्धप्रणाश नामक तन्त्र) उसके पश्चात्, पञ्चतन्त्र का अपरीक्षितकारक नाम वाला यह पाँचवा तन्त्र प्रारम्भ किया जाता है, उसका यह प्रथम श्लोक है-

**कुदृष्टं कुपरिज्ञातं कुश्रुतं कुपरीक्षितम् ।**

**तत्ररेण न कर्त्तव्यं नापितेनात्र यत्कृतम् ॥5.1॥**

**हिन्दी अनुवाद-** अच्छे से- बिना देखे, बिना जाने, बिना सुने, बिना परीक्षण किये वह (कोई कार्य) मनुष्य के द्वारा नहीं किया जाना चाहिए, जैसे नापित (नाई) के द्वारा किया गया।

**तद्यथानुश्रूयते अस्ति दाक्षिणात्ये जनपदे पाटलिपुत्रं नाम नगरम्। तत्र मणिभद्रो नाम श्रेष्ठी प्रतिवसति स्म। तस्य च धर्मार्थकाममोक्षकर्माणि कुर्वतो विधिवशाद्धनक्षयः सञ्जातः। ततो**



विभवक्षयादपमानपरम्परया परं विषादं गतः। अथान्यदा रात्रौ सुप्तिश्चिन्तितवानहो धिगियं दरिद्रता। उक्तं च-

**हिन्दी अनुवाद-** जैसा कि सुना जाता है- दक्षिण के एक राज्य में पाटलिपुत्र नाम का नगर है। वहाँ मणिभद्र नाम का सेठ रहता था। और उसका धर्म, अर्थ, काम के कर्म करते हुए का भाग्यवश धन नष्ट हो गया। वैभव के नष्ट हो जाने से होने वाली अपमान की परम्परा के कारण वह गहन दुःख को प्राप्त हुआ। एक रात्रि में सोते हुए उसने सोचा। अहो! इस दरिद्रता को धिक्कार है। कहा भी गया है-

**शीलं शौचं क्षान्तिर्दाक्षिण्यं मधुरता कुले जन्म ।**

**न विराजन्ति हि सर्वे वित्तविहीनस्य पुरुषस्य ॥5.2॥**

**हिन्दी अनुवाद-** सम्पत्ति से रहित व्यक्ति के आचरण, शुद्धता, क्षमाभाव, उदारता या दानशीलता, मधुरता, कुलीनता नहीं ठहरते हैं।

**मानो वा दर्पो वा विज्ञानं विभ्रमः सुबुद्धिर्वा ।**

**सर्वं प्रणश्यति समं वित्तविहीनो यदा पुरुषः ॥5.3॥**

**हिन्दी अनुवाद-** जब व्यक्ति निर्धन होता है तो उसका सम्मान, गर्व, विज्ञान (मोक्ष-बुद्धि/ शिल्पशास्त्रादि) या सुबुद्धि, शोभा ये सभी नष्ट हो जाते हैं।

**प्रतिदिवसं याति लयं वसन्तवाताहतेव शिशिरश्रीः ।**

**बुद्धिर्बुद्धिमतामपि कुटुम्बभरचिन्तया सततम् ॥5.4॥**

**हिन्दी अनुवाद-** कुटुम्ब के भरणपोषण की निरन्तर चिन्ता से प्रत्येक दिन उसी प्रकार नष्ट हो जाता है जैसे वसन्त की वायु के प्रभाव से शिशिर ऋतु की शोभा।

**नश्यति विपुलमतेरपि बुद्धिः पुरुषस्य मन्दविभवस्य ।**

**घृतलवणतैलतण्डुलवस्त्रेन्धनचिन्तया सततम् ॥5.5॥**

**हिन्दी अनुवाद-** धन कम होने के कारण घी, लवण, तैल, चावल, वस्त्र, इन्धन की निरन्तर चिन्ता से अच्छी बुद्धि वाले व्यक्ति की बुद्धि भी नष्ट होने लगती है।

**गगनमिव नष्टतारं शुष्कमिव सरः श्मशानमिव रौद्रम् ।**

**प्रियदर्शनमपि रूक्षं भवति गृहं धनविहीनस्य ॥5.6॥**

**हिन्दी अनुवाद-** तारे रहित आकाश, सूखे तालाब व रौद्र श्मशान की तरह धनविहीन व्यक्ति के घर में प्रिय व्यक्ति का दर्शन भी रूखा होता है।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



टिप्पणी

न विभाव्यन्ते लघवो वित्तविहीनाः पुरोऽपि निवसन्तः।

सततं जातविनष्टाः पयसामिव बुद्बुदाः पयसि ॥5.7॥

**हिन्दी अनुवाद-** जल में निरन्तर उठकर नष्ट होने वाले बुद्बुदों की तरह लघु वित्त रहित व्यक्ति सामने रहते हुए भी शोभित नहीं होते अर्थात् ऐसे व्यक्ति पर कोई ध्यान नहीं देता अपितु उपेक्षा कर देता है।

सुकुलं कुशलं सुजनं विहाय कुलकुशलशीलविकलेऽपि ।

आढ्ये कल्पतराविव नित्यं रज्यन्ति जननिवहाः ॥5.8॥

**हिन्दी अनुवाद-** लोग अच्छे कुलीन चतुर सुजन (किन्तु निर्धनी पुरुष) को छोड़कर चतुरता और शील से हीन धनी पुरुष में भी कल्पवृक्ष के समान नित्य अनुराग प्रकट करते हैं।

विफलमिह पूर्वसुकृतं विद्यावन्तोऽपि कुलसमुद्भूताः ।

यस्य यदा विभवः स्यात्तस्य तदा दासतां यान्ति ॥5.9॥

**हिन्दी अनुवाद-** इस संसार में पूर्व में किये हुए अच्छे कर्म निष्फल हैं (क्योंकि) विद्यावान् और अच्छे कुल में उत्पन्न हुए व्यक्ति भी उनकी दासता को प्राप्त होते हैं जिसके पास सम्पत्ति हो।

लघुरयमाह न लोकः कामं गर्जन्तमपि पतिं पयसाम् ।

सर्वमलज्जाकरमिह यद्यत्कुर्वन्ति परिपूर्णाः ॥5.10॥

**हिन्दी अनुवाद-** मनुष्य कठोर गर्जन ध्वनि करते हुए भी जल के पति सागर (धनी) को यह अल्पवेग है ऐसा नहीं कहते। धन से परिपूर्ण लोग इस संसार में जो कुछ करते हैं वह उनके लिए लज्जा करने वाला नहीं होता (इसके विपरीत सब प्रशंसा ही करते हैं)।

एवं सम्प्रधार्य भूयोऽप्यचिन्तयत्तदहमनशनं कृत्वा प्राणानुत्सृजामि । किमनेन व्यर्थजीवितव्यसनेन? एवं निश्चयं कृत्वा सुप्तः । अथ तस्य स्वप्ने पद्मनिधिः क्षपणकरूपो दर्शनं दत्त्वा प्रोवाच भोः श्रेष्ठिन्! मा त्वं वैराग्यं गच्छ । अहं पद्मनिधिस्तव पूर्वपुरुषोपार्जितः । तदनेनैव रूपेण प्रातस्त्वद्गृहमागमिष्यामि । तत्त्वयाहं लगुडप्रहारेण शिरसि ताडनीयः, येन कनकमयो भूत्वा क्षयो भवामि।

अथ प्रातः प्रबुद्धः सन् स्वप्नं स्मरंश्चिन्ताचक्रमारूढस्तिष्ठति अहो सत्योऽयं स्वप्नः किं वा असत्यो भविष्यति, न ज्ञायते। अथवा नूनं मिथ्यानेन भाव्यम्। यतोऽहमहर्निशं केवलं वित्तमेव चिन्तयामि। उक्तं च-



**हिन्दी अनुवाद-** ऐसा विचार कर बार-बार सोचने लगा कि "मैं अनशन करके प्राणों को त्याग दूँ। इस व्यर्थ जीवन-दोष से क्या लाभ है? ऐसा निश्चय कर (वह) सो गया। अब उसके स्वप्न में पद्मनिधि बौद्ध संन्यासी के वेष में दर्शन देकर बोला, "हे सेठ! तुम वैराग्य को मत प्राप्त हो। मैं पद्मनिधि तुम्हारे पूर्वज पुरुषों द्वारा अर्जित किया हुआ हूँ। इसलिए, इसी रूप में प्रातःकाल तुम्हारे घर को आऊँगा। तब तुम मेरे शिर पर लाठी से प्रहार करना। जिससे मैं स्वर्ण का होकर अक्षय हो जाऊँगा अर्थात् तुम्हारे घर में सदा के लिए निवास करने लगूँगा।"

इसके पश्चात् प्रभात में जागकर (सेठ) स्वप्न को स्मरण करता चिन्ता के चक्कर में बैठा हुआ, "अहो यह स्वप्न सत्य है, या असत्य होगा? मैं यह नहीं जानता। अथवा अवश्य ही मिथ्या होगा, इसका कारण है कि प्रतिदिन मैं धन के बारे में ही चिन्तन करता हूँ। कहा भी गया है-

**व्याधितेन सशोकेन चिन्ताग्रस्तेन जन्तुना।**

**कामार्तेनाथ मत्तेन दृष्टः स्वप्नो निरर्थकः ॥5.11॥**

**हिन्दी अनुवाद-** रोगी, दुःखी, चिन्ताग्रस्त, काम से पीड़ित और उन्मत्त या विक्षिप्त लोगों को जो स्वप्न दिखाई पड़ता है, वह प्रायः निरर्थक ही होता है ॥11॥

#### बोध-प्रश्न

- पञ्चतन्त्र के पाँचवे तन्त्र का नाम है-  

(क) अपरीक्षितकारक	(ख) लब्धप्रणाश
(ग) मित्रभेद	(घ) मित्रलाभ
- मणिभद्र नाम का सेठ किस नगर में रहता था-  

(क) वैशाली	(ख) पाटलिपुत्र
(ग) इन्द्रप्रस्थ	(घ) तक्षशिला
- वसन्त की वायु के प्रभाव से किस ऋतु की शोभा कम हो जाती है-  

(क) शरद	(ख) शिशिर
(ग) ग्रीष्म	(घ) वर्षा
- सेठ मणिभद्र को स्वप्न में बौद्ध संन्यासी के वेष में किसने दर्शन दिये-  

(क) पद्मनिधि	(ख) करुणानिधि
(ग) प्रेमनिधि	(घ) विष्णु



टिप्पणी

5. निम्नलिखित में से किसके द्वारा देखा गया स्वप्न प्रायः निरर्थक होता है-

- |                   |              |
|-------------------|--------------|
| (क) दुःखी         | (ख) रोगी     |
| (ग) काम से पीड़ित | (घ) उक्त सभी |

#### 1.4 क्षपणक-नापित प्रकरण

एतस्मिन्नन्तरे तस्य भार्यया कश्चिन्नापितः पादप्रक्षालनायाहूतः अत्रान्तरे च यथानिर्दिष्टः क्षपणकः सहसा प्रादुर्बभूव । अथ स तमालोक्य प्रहृष्टमना यथासन्नकाष्ठदण्डेन तं शिरस्यताडयत् । सोऽपि सुवर्णमयो भूत्वा तत्क्षणात्भूमौ निपतितः । अथ तं स श्रेष्ठी निभृतं स्वगृहमध्ये कृत्वा नापितं सन्तोष्य प्रोवाच तदेतद्धनं वस्त्राणि च मया दत्तानि गृहाण । भद्र! पुनः कस्यचिन्नाख्येयोऽयं वृत्तान्तः ।

नापितोऽपि स्वगृहं गत्वा व्यचिन्तयन्नूनमेते सर्वेऽपि नग्नकाः शिरसि ताडिताः काञ्चनमया भवन्ति । तदहमपि प्रातः प्रभूतानाहूय लगुडैः शिरसि हन्मि, येन प्रभूतं हाटकं मे भवति । एवं चिन्तयतो महता कष्टेन निशातिचक्राम ।

**हिन्दी अनुवाद-** इसी समय उस सेठ की पत्नी ने किसी नाई को पैर धोने के लिए बुलाया । इसी समय वह जैन साधु भी अचानक से प्रकट हो गया (जो सेठ को स्वप्न में दिखाई दिया था) । वह उसे देखकर प्रसन्न मन से निकट में स्थित काष्ठ की लकड़ी से उसके शिर पर चोट करता गया । वह भी सोने का होकर उसी समय धरती पर गिरा । तब वह सेठ एकान्त में उसे अपने घर में ले जाकर नाई को सन्तुष्ट कर बोला, “यह धन और वस्त्र मेरे दिये हुए ग्रहण कर । हे भद्र (भले व्यक्ति)! यह घटनाक्रम किसी को मत बताना” । नाई भी अपने घर में जाकर विचारने लगा, - “अवश्य ही यह सभी जैन संन्यासी शिर में डण्डे से मारने से सोने के हो जाते हैं इसलिए मैं भी अनेक जैन संन्यासियों को बुलाकर डण्डे से शिर में प्रहार करके मारूँ । जिससे मेरे यहाँ बहुत सा धन हो जाये” । ऐसा विचार करके बड़े कष्ट से उसने रात बिताई ।

**अथ प्रभातेऽभ्युत्थाय बृहल्लगुडमेकं प्रगुणीकृत्य, क्षपणकविहारं गत्वा जिनेन्द्रस्य प्रदक्षिणत्रयं विधाय, जानुभ्यामवनिं गत्वा वक्त्रद्वारन्यस्तोत्तरीयाञ्चलस्तारस्वरेणेमं श्लोकमपठत्**

**हिन्दी अनुवाद-** वह नाई प्रातःकाल में उठकर एक बड़े डण्डे को सज्जित करके (तैयार करके) बौद्ध भिक्षुओं के मठ में गया । वहाँ जाकर बुद्ध की प्रतिमा की तीन परिक्रमा करके, घुटनों के बल जमीन पर बैठकर, मुख को दुपट्टे के छोर से ढककर, ऊँचे स्वर में इस श्लोक को पढ़ा-



जयन्ति ते जिना येषां केवलज्ञानशालिनाम्।

आ जन्मनः स्मरोत्पत्तौ मानसेनोषरायितम् ॥5.12॥

**हिन्दी अनुवाद-** केवल ज्ञान ही जिनके जीवन आचरण में है, जिनकी मन रूपी धरती कामरूपी बीज के उगने में जन्म से ही ऊषर की तरह है अर्थात् जैसे बंजर भूमि में डाला गया बीज नहीं उगता है उसी प्रकार जिनों के मन में कामविकार उत्पन्न नहीं होता है, उन जिनों की जय हो। (जिन उसे कहा जाता है जिसने अपने मन व इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ली हो।)

अन्यच्च

सा जिह्वा या जिनं स्तौति तच्चित्तं यज्जिने रतम्।

तौ एव तु करौ श्लाघ्यौ यौ तत्पूजाकरौ करौ ॥5.13॥

**हिन्दी अनुवाद-** और वही जिह्वा प्रशंसा के योग्य है जो जिन की स्तुति करती है। वही मन प्रशंसा के योग्य है जो जिन के ध्यान में लगा हुआ है। वे ही हाथ प्रशंसा के योग्य हैं जो जिन की पूजा करते हैं।

तथा च

ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि कामुन्मील्य चक्षुः क्षणं

पश्यानङ्गशरातुरं जनमिमं त्रातापि नो रक्षसि ।

मिथ्याकारुणिकोऽसि निर्घृणतरस्त्वत्तः कुतोऽन्यः पुमान्

सेर्ष्य मारवधूभिरित्यभिहितो बौद्धो जिनः पातु वः ॥5.14॥

**हिन्दी अनुवाद-** 'आप ध्यान लगाने के बहाने किस सुन्दरी का चिन्तन कर रहे हैं? कुछ क्षणों के लिए अपनी आँखें खोलकर कामबाण से दुःखी इन लोगों की ओर भी देख लीजिए। आप तो संसार के कष्टों को हरने वाले हैं, तब हम लोगों की इस कामपीड़ा को दूर क्यों नहीं करते हैं? अरे तुम तो दिखावे के ही दयालु बने हुए हो अर्थात् वास्तव में दयालु नहीं हो। तुम से बड़ा निर्दयी कौन पुरुष होगा जो शरण में आये हुए काम से पीड़ित हम सुन्दरियों की ओर देख भी नहीं रहे हो।' (बुद्ध भगवान की तपस्या में विघ्न करने को कामदेव अपनी अप्सराओं की सेना को साथ लेकर आया था, पर बुद्ध भगवान् ने उधर देखा भी नहीं, उस समय उन अप्सराओं ने बुद्ध को यह उलाहना दिया था) इस प्रकार काम की वधुओं (अप्सराओं) के द्वारा ईर्ष्यापूर्वक उलाहना दिए गए भगवान् बुद्ध हमारी रक्षा करें।

एवं संस्तूय, ततः प्रधानक्षपणकमासाद्य क्षितिनिहितजानुचरणः नमोऽस्तु वन्दे इत्युच्चार्य, लब्धधर्मवृद्ध्याशीर्वादः सुखमालिकानुग्रहलब्धव्रतादेश उत्तरीयनिबद्धग्रन्थिः सप्रश्रयमिदमाहभगवनद्य विहरणक्रिया समस्तमुनिसमेतेनास्मद्गृहे कर्तव्या।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



टिप्पणी

स आह- 'भोः श्रावक! धर्मज्ञोऽपि किमेवं वदसि? किं वयं ब्राह्मणसमानाः, यत आमन्त्रणं करोषि? वयं सदैव तत्कालपरिचर्याया भ्रमन्तो भक्तिभाजं श्रावकमवलोक्य, तस्य गृहे गच्छामः। तेन कृच्छ्रादभ्यर्थितास्तद्गृहे प्राणधारणमात्रामशनक्रियां कुर्मः।

-तद्गम्यताम्, नैवं भूयोऽपि वाच्यम्।'

तच्छ्रुत्वा नापित आह भगवन्! वेदम्यहं युष्मद्धर्मम् । परं भवतो बहुश्रावका आह्वयन्ति । साम्प्रतं पुनः पुस्तकाच्छादनयोग्यानि कर्पटानि बहुमूल्यानि प्रगुणीकृतानि । तथा पुस्तकानां लेखनार्थं लेखकानां च वित्तं सञ्चितमास्ते तत्सर्वथा कालोचितं कार्यम्।

**हिन्दी अनुवाद-** इस प्रकार महात्मा बुद्ध की अच्छे से स्तुति करके, वह नाई उस मठ के महन्तजी के पास जाकर भूमि पर घुटनों को स्पर्श कराके- 'नमन हो', 'वन्दना करता हूँ' ऐसा उच्चारण करके, धर्म की वृद्धि होने का आशीर्वाद प्राप्त करके, प्रसाद रूप में पुष्पों की माला व सूतमाला प्राप्त करके विनयपूर्वक यह बोला- आज सभी भिक्षुओं के साथ आप मेरे घर पर ही विहार (भोजन आदि) करें।

उन मठाधीश जी ने कहा- 'हे श्रावक (भक्त)! (हमारे) धर्म के सम्बन्ध में जानते हुए भी ऐसा क्यों बोल रहे हैं! क्या हम ब्राह्मण समान हैं जो निमन्त्रण स्वीकार करेंगे? हम सदा ही आवश्यकता के अनुरूप भ्रमण करते हुए, श्रद्धालु श्रावक को देखकर उसके घर जाते हैं। उसके द्वारा कष्टपूर्वक की गई प्रार्थना किये जाने पर शरीर धारण करने के लिए आवश्यक भोजन करते हैं। अतः जाइये, इस प्रकार पुनः न कहना।'

वह सुनकर नाई बोला- 'भगवन्! मैं आपके धर्म को जानता हूँ। परन्तु आप सभी को अनेक श्रावक बुलाते हैं। इस समय पुस्तकों को आवरित करने के लिए बहुमूल्य कपड़े एकत्रित कर रखे हैं। उसी प्रकार पुस्तकें लिखने के लिए और लेखकों के लिए धन एकत्रित किया हुआ है। इसके अनुरूप आप जैसा उचित हो वैसा ही करें।'

ततो नापितोऽपि स्वगृहं गतः । तत्र च गत्वा खदिरमयं लगुडं सज्जीकृत्य कपाटयुगलं द्वारि समाधाय सार्धप्रहरैकसमये भूयोऽपि विहारद्वारमाश्रित्य सर्वान् भक्तियुक्तानपि परिचितश्रावकान् परित्यज्य प्रहृष्टमनसस्तस्य पृष्ठतो ययुः । अथवा साध्विदमुच्यते

एकाकी गृहसन्त्यक्तः पाणिपात्रो दिगम्बरः ।

सोऽपि सम्बाध्यते लोके तृष्णया पश्य कौतुकम् ॥5.15॥

जीर्यन्ते जीर्यतः केशा दन्ता जीर्यन्ति जीर्यतः ।

चक्षुः श्रोत्रे च जीर्येते तृष्णैका तरुणायते ॥5.16॥



**हिन्दी अनुवाद-** इतना कहने के पश्चात् नाई भी अपने घर चला गया। घर जाकर खैर की लकड़ी को सजाकर, किवाड़ों को द्वार पर खड़ाकर, डेढ़ पहर दिन बीतने के समय (दश बजकर दश मिनट) पुनः क्षपणकविहार के द्वार के निकट जाकर बैठ गया, पंक्ति में निकलते हुए सभी को बहुत प्रार्थना करके अपने घर ले आया। वे सभी भी भक्त, परिचित श्रावकों का त्याग करके कपड़े व धन के लोभ से प्रसन्न मन से उस नाई के पीछे चले गये। उचित ही कहा जाता है-

‘देखें आश्चर्य की बात है! घर त्यागकर अकेले रहने वाले, हाथों में भिक्षा लेकर खाने वाले, वस्त्र न लपेटने वाले भी लोक में तृष्णा से वश में कर लिये जाते हैं।’

‘वृद्ध होने पर केश जीर्ण (सफेद) हो जाते हैं, दाँत भी जीर्ण हो जाते हैं, आँखें व कान भी जीर्ण हो जाते हैं लेकिन एक तृष्णा तरुण होती जाती है।’

**अपरं-** गृहमध्ये तान् प्रवेश्य द्वारं निभृतं पिधाय, लगुडप्रहारैः शिरस्यताडयत् । तेऽपि ताड्यमाना एके मृताः, अन्ये भिन्नमस्तका फूत्कर्तुमुपचक्रमिरे । अत्रान्तरे तमाक्रन्दमाकर्ण्य कोटरक्षपालेनाभिहितम् – ‘भो भोः? किमयं महान्कोलाहलो नगरमध्ये? तद्गम्यताम्, गम्यताम्! ते च सर्वे तदादेशकारिणस्तत्सहिता वेगात्तद्गृहं गता यावत्पश्यन्ति तावद्बुधिरप्लावितदेहाः पलायमाना, नग्नका दृष्टाः । पृष्टाश्च- ‘भोः किमेतत्? ते प्रोचुर्यथावस्थितं नापितवृत्तम्।

तैरपि स नापितो बद्धो हतशेषैः सह धर्माधिष्ठानं नीतः । तैर्नापितः पृष्टःभोः! किमेतत्भवता कुकृत्यमनुष्ठितम्?

स आह किं करोमि? मया श्रेष्ठिमणिभद्रगृहे दृष्ट एवंविधो व्यतिकरः । सोऽपि सर्वं मणिप्रभवृत्तान्तं यथादृष्टमकथयत् ।

ततः श्रेष्ठिनमाहूय ते भणितवन्तःभोः श्रेष्ठिन्! किं त्वया कश्चित्क्षपणको व्यापादितः?

ततः तेनापि सर्वः क्षपणकवृत्तान्तस्तेषां निवेदितः । अथ तैरभिहितमहो शूलमारोप्यतामसौ दुष्टात्मा कुपरिक्षितकारी नापितः । तथानुष्ठिते तैरभिहितम्

कुदृष्टं कुपरिज्ञातं कुश्रुतं कुपरीक्षितम्।

तन्नरेण न कर्तव्यं नापितेनात्र यत्कृतम् ॥5.17॥

**हिन्दी अनुवाद-** इस प्रकार उनको (बौद्ध-जैन संन्यासियों को) घर में प्रवेश कराकर, द्वार को अच्छे से बन्द करके, शिरों पर लाठियों से प्रहार किया। प्रहार से कुछ संन्यासी तो मर गये, अन्य शिर फूटने से ऊँचे स्वर में रोने लगे।





टिप्पणी

इस प्रकार कोलाहल सुनकर कोतवाल ने आरक्षकों को कहा कि – अरे! देखो तो नगर में यह अत्यधिक कोलाहल कैसे हो रहा है? शीघ्रता से चलो, चलो! कोतवाल की आज्ञा से, कोतवाल के साथ आरक्षक तेजी से उस नाई के घर पहुँचे। जहाँ देखते हैं वहीं जिनके शरीर रक्त से लथपथ थे ऐसे बहुत से जैन-बौद्ध संन्यासी - इधर-उधर दौड़ते हुए दिखाई दिए।

आरक्षकों ने उनसे पूछा कि यह क्या हुआ? तो उन्होंने नाई के किये गये कृत्य के बारे में सब कह दिया। उन आरक्षकों द्वारा उस नाई को पकड़कर बाँध लिया और जो संन्यासी मरने से बच गये थे, उनके साथ ही उसे (नाई को) भी न्यायालय में ले जाया गया। न्यायाधीशों द्वारा नाई से पूछा गया- तुमने यह अनर्थ क्यों किया? नाई ने कहा – क्या करूँ? मैंने मणिभद्र सेठ के घर में जैसा देखा था वैसा ही किया है और साथ में ही सेठ के घर में जैसा देखा था, वह कह दिया।

तब न्यायाधीशों ने उस सेठ को बुलाकर पूछा, कि -सेठ जी, क्या तुमने किसी जैन-बौद्ध संन्यासी को मारा था? तब सेठ जी ने अपने स्वप्न का सब वृत्तान्त न्यायाधीशों के सामने कह दिया। तब न्यायाधीशों ने कहा- 'अरे! इस दुष्ट आत्मा, बिना सही से जाने कार्य करने वाले नाई को सूली पर लगा दिया जाये।' और उनकी आज्ञा से वह नाई फाँसी पर लटका दिया गया। इस आदेश का पालन करने पर उनके द्वारा कहा गया- 'अच्छे से बिना देखे, अच्छे से बिना समझे, अच्छे से सुने बिना, अच्छे से परीक्षा किये बिना, बुद्धिमान् मनुष्य को कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए जैसा नाई ने यहाँ किया' ॥

## 1.5 कथान्त

अथवा साध्विदमुच्यते

अपरीक्ष्य न कर्त्तव्यं कर्त्तव्यं सुपरीक्षितम्।

पश्चात् भवति सन्तापो ब्राह्मण्या नकुलाद्यथा ॥5.18॥

मणिभद्र आह- कथमेतत्?

ते धर्माधिकारिणः प्रोचुः

हिन्दी अनुवाद-

(और उन न्यायाधीशों ने आगे कहा)

या उचित ही कहा जाता है-



बिना सम्यक् परीक्षा किये मनुष्य को कार्य नहीं करना चाहिए। (कोई भी काम हो) अच्छे से चिन्तन करके ही करना चाहिए। अन्यथा बाद में पश्चाताप ही होता है, जैसे ब्राह्मणी को नकुल (नेवला) (के मर जाने) से हुआ था।

तब मणिभद्र सेठ ने कहा – ‘यह (कहानी) कैसे है? उन धर्माधिकारियों (न्यायाधीशों) ने बताया’-

(इससे आगे का भाग दूसरी कथा में है जो अगले पाठ में है)

## 1.6 सारांश

प्रिय विद्यार्थियो! आपने इस कहानी में जाना कि नापित (नाई) ने जो घटना देखी उसका सन्दर्भ सहित विश्लेषण नहीं किया। उसने मणिभद्र के द्वारा क्षपणक के सिर पर लकड़ी के प्रहार करने से क्षपणक को सोने का बनते देखा। वह मणिभद्र के सपने के प्रसंग से अपरिचित था। इस प्रकार उसने बिना प्रसंग जाने वैसा ही करने का निश्चय कर लिया और क्षपणकों को घर बुलाकर उन पर लकड़ी से प्रहार कर दिया। इससे वह उन क्षपणकों के लिए समस्या बनकर स्वयं भी दण्ड का भागी बना। उपर्युक्त कथा यह बताती है कि हमें जीवन में किसी भी कार्य को उचित परीक्षण करके, उसके सभी पक्षों को जानकर ही करना चाहिए, न कि बिना जाने।

## 1.7 कठिन शब्दावली

- अथ – के अनन्तर
- इदम् – यह
- आरभ्यते – प्रारम्भ किया जाता है
- पञ्चमम् – पाँचवा
- तस्य – उसका
- अयम् – यह
- आदिमः – प्रथम
- यथा – जैसे



टिप्पणी

- अनुश्रूयते – परम्परा से सुना जाता है
- श्रेष्ठी – सेठ (व्यापारी)
- प्रतिवसति स्म – रहता था
- कुर्वतो – करते हुए का
- सज्जातः – हो गया
- विषादं – दुःख को
- धिक् – धिक्कार
- कुदृष्टम् – अविचारित
- कुपरिज्ञातम् – सही रूप में न जाना गया
- कुश्रुतम् – सम्यक् रूप से न सुना गया
- कुपरीक्षितम् – उचित परीक्षण किये बिना
- नापित – नाई
- यत्कृतम् – जो किया गया
- शील – आचरण
- शौच – शुद्धता
- दाक्षिण्य – उदारता या दानशीलता
- विराजन्ति – ठहरते हैं
- वित्त – धन
- मान – सम्मान
- दर्प – गर्व,
- वित्तविहीन – धनरहित
- प्रतिदिवसम् – प्रत्येक दिन
- याति – जाती है या प्राप्त होती है
- लयम् – विनाश या क्षय
- श्रीः – शोभा



- आहत – पीड़ित
- नश्यति – नष्ट होती है
- विपुलमते: – विशाल बुद्धि वाले
- मन्दविभवस्य – वैभव (धन आदि) की कमी हो गई हो जिसके जीवन में
- तण्डुल – चावल
- गगन – आकाश
- इव – की तरह
- नष्टतारम् – जिस रात्रि में आकाश से तारे नष्ट हो गये हों
- सरः – जलाशय
- रूक्षम् – रूखा
- न विभाव्यन्ते – प्रकाशित नहीं होते अर्थात् दिखाई नहीं देते
- वित्तविहीनाः – धन से रहित
- लघवः – तुच्छ/छोटे
- पुरो – सामने
- अपि – भी
- निवसन्तः – रहते हुए
- जातविनष्टाः – उत्पन्न होते ही नष्ट होने वाले
- पयसः – जल के
- बुद्बुदा इव – बुलबुले के समान
- पयसि – जल में
- सुकुलं – अच्छे कुल वाला
- कुशल – प्रवीण
- सुजन – अच्छे चरित्र वाला
- विहाय – छोड़कर
- विकल – रहित



टिप्पणी

- आढ्ये – धनवान व्यक्ति में
- जननिवहा: – लोगों के समूह
- रज्यन्ति – प्रसन्न होते हैं, अनुराग करते हैं
- विफल – निष्फल या इच्छित परिणाम रहित
- इह – यहाँ
- पूर्वसुकृतं – पूर्व में किये हुए अच्छे कर्म
- यदा – जब
- विभवः – धन-धान्य से युक्त होने की स्थिति
- तदा – तब
- तस्य – उसकी
- दासतां – अधीनता या समर्पण को
- यान्ति – प्राप्त होते हैं
- लघु – अल्प
- आह – कहा
- लोकः – जगत्/लोग
- कामम् – इच्छा
- पयसां पतिम् – जलों के, स्वामी को अर्थात् सागर को
- अलज्जाकरम् – लज्जा न करने वाले
- इह – इस जगत् में
- यद्यद् – जो-जो
- कुर्वन्ति – करते हैं
- परिपूर्णाः – धन-धान्य से सम्पन्न
- एवम् – इस प्रकार
- सम्प्रधार्य – विचार करके
- भूयो अपि – पुनः भी



- अनशनम् कृत्वा – अनशन (भोजन त्यागना) करके
- प्राणान् – प्राणों को
- उत्सृजामि – त्यागता हूँ
- व्यसन – दोष
- सुप्तः – सो गया
- क्षपणक – जैन या बौद्ध संन्यासी
- वैराग्य – संसार के प्रति उदासीनता का भाव
- पूर्वपुरुषोपार्जितः – पूर्वजों द्वारा कमाया हुआ
- लगुड – लाठी, शिरसि- सिर पर
- कनकमय – स्वर्ण का
- आरूढ – सवार
- नूनम् – निश्चय ही
- मिथ्या – झूठ/जैसा दिखता है वैसा नहीं होना
- अहर्निशं – दिन-रात
- व्याधितेन – रोगी व्यक्ति द्वारा
- सशोकेन – दुःखी व्यक्ति द्वारा
- जन्तुना – मनुष्य द्वारा
- कामार्त्तेन – काम से पीड़ित
- मत्तेन – उन्मत्त या विक्षिप्त द्वारा
- दृष्टः – देखा हुआ
- निरर्थकः – कोई अर्थ न रखने वाला या फलीभूत न होने वाला
- अन्तरे – मध्य में
- तस्य – उसके (सेठ के)
- पादप्रक्षालनाय – पैर धोने के लिए (पैर पखारना जिसे कुछ स्थानों पर नहछू भी कहते हैं, के लिए)



टिप्पणी

- अत्राऽन्तरे – इस अवसर पर
- यथानिर्दिष्टः – पूर्व में स्वप्न में जैसा देखा गया
- सः – वह (सेठ)
- तं – उसको (पद्मनिधि को)
- प्रहृष्टमनाः – प्रसन्न होता हुआ
- यथाऽऽसन्न काष्ठदण्डेन – निकट में स्थित लकड़ी के डण्डे से
- तं – उसको (नाई को)
- तत्क्षणात् – उसी समय ही
- निभृतं – गुप्त (छुपाकर)
- कृत्वा – करके
- सन्तोष्य – धन आदि से पुरस्कृत करके
- तदेतत् – वह यह
- न आख्येय – नहीं कहना चाहिए
- नूनम् – निश्चित रूप से
- नग्नकाः – क्षपणक (जैन साधु)
- प्रभूतं – विस्तृत मात्रा में
- हाटकम् – विशेष प्रकार का सोना
- चिन्तयतः – विचार करता हुआ
- महता कष्टेन – बहुत कष्ट से
- कथञ्चित् – किसी प्रकार
- निशा – रात्रि
- अतिचक्राम – व्यतीत की
- प्रगुणीकृत्य – सज्जित करके
- क्षपणकविहारः – बौद्ध-जैन भिक्षुओं के निवास के लिए मठ
- जिनेन्द्रस्य – बुद्ध के



- जिनस्य च – प्रतिमा के
- वक्त्रद्वारे न्यस्तमुत्तरीयस्याऽञ्चलं येन सः – मुख के आगे दुपट्टा का छोर जिसके द्वारा लगाया गया वह
- तारस्वरेण – ऊँचे स्वर से (में) स्वरेण
- इमं – बताये जा रहे
- आ जन्मनः – जन्म से ही
- स्मरोत्पत्तौ – कामवासना रूपी अंकुर की उत्पत्ति
- ऊषरायितम् – बंजर भूमि की तरह व्यवहार करने वाला (ऊषर भूमि में डाला गया बीज उगता नहीं)
- सा – वह (यहाँ प्रशंसनीय जिह्वा के लिए सा)
- स्तौति – स्तुति करती है
- तद् चित्तं – प्रशंसनीय मन
- श्लाघ्यौ – प्रशंसा के योग्य
- तावेव (तौ+एव) – वे ही
- करौ – दोनों हाथ
- ध्यानस्य व्याजः – ध्यान का छल (ध्यान के बहाने)
- उपेत्य – प्राप्त करके या आश्रय लेकर
- कां – किस स्त्री के
- उन्मीलय – आँखें बन्द करके
- चिन्तयसि – चिन्तन कर रहे हो
- अनङ्गशरातुरं – कामदेव के बाणों से दुःखी
- इमं जनम् – इस व्यक्ति को
- पश्य – देखिए
- त्राता – रक्षक
- नः – हम सभी की





टिप्पणी

- रक्षसि – रक्षा करते हैं
- मिथ्याकारुणिकः – दिखावे के दयालु
- त्वत्तः – तुमसे,
- निर्घृणतरः – निर्दयी
- शिरोमणिः, पुमान् – पुरुष
- मारवधुभिः – अप्सराओं के द्वारा
- पातु – रक्षा करे
- वः – हमारी
- प्रधानक्षपणकः – मुख्य भिक्षु अर्थात् मठाधीश
- क्षितिनिहितजानुचरणं – भूमि पर घुटनों को स्पर्श करके
- लब्धधर्मवृद्ध्याशीर्वादः – 'तुम्हारे धर्म की वृद्धि हो' - ऐसा आशीर्वाद प्राप्त किया
- सुखमालिका – प्रसाद रूप में दी जाने वाली पुष्पों की माला
- उत्तरीयनिबद्धग्रन्थिः – सूत की माला
- खादिरमय – खैर की काष्ठयुक्त सुदृढ़
- लगुडं – बड़ा दण्ड
- समाधाय – लगाकर
- क्रमेण – क्रम से
- गुरुप्रार्थनया – बहुत अनुनय-विनय या प्रार्थना द्वारा
- कर्पटवित्तलोभेन – कपड़े व धन के लोभ से
- परित्यज्य – त्याग कर
- पृष्ठतः – पीछे
- ययुः – गये
- पाणिपात्र – हाथ ही पात्र हैं जिसके वह
- दिगम्बरः – दिशाएँ ही वस्त्र हैं जिसके अर्थात् वस्त्ररहित

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



- संवाह्यते – आकर्षित किया जाता है
- कौतुकम् – आश्चर्य
- अपरं – और
- तान् – उन भिक्षुओं को
- निभृतं – धीरे से
- एके – कुछ भिक्षुक
- अन्ये – दूसरे
- भिन्नमस्तकाः – फटे शिर वाले
- फूतकर्तुम् – तीव्रता से रोने के लिए
- आक्रन्दः – कोलाहल
- कोटरक्षपालेन – कोतवाल के द्वारा
- तदादेशकारिणः – उसके आदेश का पालन करने वाले अर्थात् सिपाही लोग
- पलायमानाः – जाते हुए
- नग्नकाः – भिक्षुक
- हतशेषैः सह – मरने से बचे हुए लोगों के साथ
- धर्माधिष्ठानम् – न्यायालय
- कारणिकैः – न्यायालय में स्थित न्यायाधीशों के द्वारा
- व्यतिकरः – विपरीत आचरण
- व्यापादितः – मारा गया
- शूलं – वधसाधन या शूली
- कुपरीक्षितकारी – अच्छे से परीक्षण किये बिना कार्य करने वाला
- सन्तापः – पश्चात्ताप
- नकुल – नेवला
- प्रोचुः – कहा



टिप्पणी

### 1.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ख)
3. (ख)
4. (क)
5. (घ)

### 1.9 अभ्यास प्रश्न

1. 'कुदृष्टं कुपरिज्ञातं कुश्रुतं कुपरीक्षितम्। तन्नरेण न कर्तव्यं नापितेनात्र यत्कृतम् ॥'- इस पद्य के भावार्थ को सप्रसंग स्पष्ट कीजिए।
2. क्षपणक-नापित कथा की शिक्षा को सविस्तार स्पष्ट कीजिए।

### 1.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, गुरुप्रसादशास्त्री व सीतारामशास्त्री (टीकाकार), बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019 ।
- पञ्चतन्त्र, विष्णुशर्मा, ज्वाला प्रसाद मिश्र (टीकाकार), खेमराज श्री कृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बोम्बे, 1910 ।
- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, श्यामाचरणपाण्डेय (व्याख्याकार), मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975 ।

### 1.11 सहायक अध्ययनसामग्री

- *Pancatantram* (ed. and trans.) by M.R. Kale, Motilal Banarsidas, Delhi, 1999.
- *Pancatantram* (trans.) by Penguin Classics, Penguin Books.



पाठ-2  
ब्राह्मणी-नकुलकथा

टिप्पणी

डॉ. ओम प्रकाश

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,  
डी.डी.सी.ई., सी.ओ.एल., एस.ओ.एल.,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संरचना

- 2.1 अधिगम के उद्देश्य
- 2.2 प्रस्तावना
- 2.3 कथामुख
- 2.4 ब्राह्मणी-नकुल प्रकरण
- 2.5 कथान्त
- 2.6 सारांश
- 2.7 कठिन शब्दावली
- 2.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 2.9 अभ्यास प्रश्न
- 2.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 2.11 सहायक अध्ययनसामग्री

2.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप-

- पञ्चतन्त्र की 'ब्राह्मणी-नकुल' कथा को संस्कृत व हिन्दी में बताने में सक्षम होंगे।
- 'अपरीक्षितकारकम्' तन्त्र में उक्त कथा को क्यों रखा गया है? यह बताने में सक्षम होंगे।
- यह कथा बिना परीक्षण किये कार्य किये जाने के क्षणिक-नापित प्रकरण से भिन्न किस व्यावहारिक आयाम को दर्शाती है, यह पूर्व के अध्याय से तुलना व विश्लेषण द्वारा बता सकेंगे।
- जीवन की घटनाओं को और अधिक आलोचनात्मक दृष्टि से देखने में सक्षम होंगे।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री

23



टिप्पणी

## 2.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! आपने पूर्व के पाठ में पञ्चतन्त्र के 'अपरीक्षितकारकम्' तन्त्र की 'क्षपणक-नापित' नामक एक कथा पढ़ी। उसकी शिक्षा थी – बिना उचित परीक्षण किये किसी कार्य को नहीं करना चाहिए। उसी 'अपरीक्षितकारकम्' नामक तन्त्र की दूसरी कथा 'ब्राह्मणी-नकुल' नाम से है। इस कथा को प्रस्तुत पाठ में दिया गया है। दोनों कथाएँ एक ही तन्त्र से हैं। दोनों की शिक्षा सामान्य रूप से समान है। परन्तु दोनों में सन्दर्भ के अनुसार अपनी कुछ विशेष शिक्षाएँ हैं। प्रस्तुत कथा में उस सन्दर्भ को स्पष्टता से दर्शाया गया है। आप सभी इस कथा को ध्यानपूर्वक पढ़कर ऐसी तुलना व विश्लेषण करने का प्रयास भी कर पायेंगे, ऐसी अपेक्षा है।

## 2.3 कथामुख

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने देवशर्मा नाम ब्राह्मणः प्रतिवसति स्म । तस्य भार्या प्रसूता सुतमजनयत् । तस्मिन्नेव दिने नकुली नकुलं प्रसूय सृता । अथ सा सुतवत्सला दारकवत्तमपि नकुलं स्तन्यदानाभ्यङ्गमर्दनादिभिः पुपोष, परं तस्य न विश्वसिति । अपत्यस्नेहस्य सर्वस्नेहातिरिक्ततया सततमेवमाशङ्कते यत्कदाचिदेष स्वजातिदोषवशादस्य दारकस्य विरुद्धमाचरिष्यति इति । उक्तं च-

**हिन्दी अनुवाद-** किसी नगर में देवशर्मा नाम का ब्राह्मण रहता था। उसकी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। उसी दिन नेवली नेवले को जन्म देकर मर गई। अब सन्तान को प्रेम करने वाली उस ब्राह्मणी ने उस नेवले के बच्चे को अपने पुत्र की तरह अपना दूध पिलाकर, सेवाकर बड़ा किया। परन्तु उस पर विश्वास नहीं करती थी। पुत्र स्नेह को सर्वोपरि मानने के कारण निरन्तर शंकित रहती थी कि कभी यह नेवला अपने जातिस्वभाव के कारण पुत्र को कभी कष्ट पहुँचा सकता है। कहा भी गया है-

कुपुत्रोऽपि भवेत्पुंसां हृदयानन्दकारकः ।

दुर्विनीतः कुरूपोऽपि मूर्खोऽपि व्यसनी खलः ॥5.18॥

एवं च भाषते लोकश्चन्दनं किल शीतलम् ।

पुत्रगात्रस्य संस्पर्शश्चन्दनादतिरिच्यते ॥5.19॥



सौहृदस्य न वाञ्छन्ति जनकस्य हितस्य च ।

लोकाः प्रपालकस्यापि यथा पुत्रस्य बन्धनम् ॥5.20॥

**हिन्दी अनुवाद-** मनुष्यों को अपना कुपुत्र भी, उद्दण्ड, कुरूप भी, मूर्ख-व्यसनी-दुष्ट भी होने पर हृदय को आनन्द देने वाला ही होता है। लोक में ऐसा कहा जाता है कि –निश्चित रूप से चन्दन शीतल होता है किन्तु पुत्र के शरीर का स्पर्श चन्दन (चन्दन की शीतलता) से भी बढ़कर होता है। लोग मित्र, माता-पिता, हित करने वाले और संरक्षक तक के स्नेह को भी उतना नहीं चाहते हैं, जितना पुत्र के बन्धन को चाहते हैं।

## 2.4 ब्राह्मणी-नकुल प्रकरण

अथ सा कदाचिच्छय्यायां पुत्रं शाययित्वा जलकुम्भमादाय पतिमुवाच ब्राह्मण जलार्थमहं तडागे यास्यामि । त्वया पुत्रोऽयं नकुलाद्रक्षणीयः ।

अथ तस्यां गतायां, पृष्ठे ब्राह्मणोऽपि शून्यं गृहं मुक्त्वा भिक्षार्थं क्वचिन्निर्गतः । अत्रान्तरे दैववशात् कृष्णसर्पो विलात्रिष्क्रान्तः। नकुलोऽपि तं स्वभाववैरिणं मत्वा, भ्रातृ रक्षणार्थं सर्पेण सह युद्ध्वा, सर्पं खण्डशः कृतवान्।

ततो रुधिराऽऽप्लावितवदनः, सानन्दं स्वव्यापारप्रकाशनार्थं मातुः संमुखो गतः। माताऽपि तं रुधिरक्लिन्नमुखमवलोक्य, शङ्कितचित्ता नूनमनेन दुरात्मना (मम) दारको भक्षितः- इति विचिन्त्य, कोपात् तस्योपरि तं जलकुम्भं चिक्षेप।

**हिन्दी अनुवाद-** इस प्रकार वह (ब्राह्मणी) किसी दिन पुत्र को चारपाई पर सुलाकर, जल का घड़ा ले कर अपने पति से बोली- 'ब्राह्मण! मैं जल लेने तालाब जाती हूँ, आप इस पुत्र की नकुल से रक्षा कीजिए।'

इस प्रकार कहकर जब वह ब्राह्मणी चली गई, तब पीछे से ब्राह्मण भी घर को सूना छोड़कर भिक्षा के लिए कहीं चला गया। इसी बीच भाग्य से काला सर्प बिल से निकला। नकुल भी उस सर्प को अपने स्वभाव से शत्रु समझकर अपने भाई (ब्राह्मणी के पुत्र) की रक्षा के लिए सर्प के साथ युद्ध करके सर्प को खण्ड-खण्ड कर दिया।

तब वह रुधिर से सने हुए मुख लिए हुए, आनन्दित हुआ, अपने कार्य के बारे में बताने के लिए माता के सामने गया। माता भी उसे रुधिर से सने हुए मुख वाला देखकर, आशङ्कित मन से



टिप्पणी

‘निश्चय ही इस दुरात्मा के द्वारा मेरे बेटे को खाया गया है’- ऐसा सोचकर, क्रोध से उसके उपर उस जल के घड़े को फेंक दिया।

एवं सा नकुलं व्यापाद्य यावत्प्रलपन्ती गृहे आगच्छति, तावत्सुतस्तथैव सुप्तस्तिष्ठति। समीपे कृष्णसर्पं खण्डशः कृतमवलोक्य पुत्रवधशोकेनात्मशिरो वक्षःस्थलं च ताडितुमारब्धा।

**हिन्दी अनुवाद-** इस प्रकार नेवले को मारकर जब तक रोती हुई घर में पहुँचती है, तब तक बेटा वैसे ही सोता हुआ रहता है। पास में काले सर्प को खण्ड-खण्ड किया हुआ देखकर पुत्र (पुत्र के समान, नेवला) के दुःख से अपने शिर व छाती को पीटने लगी।

## 2.5 कथान्त

अत्रान्तरे ब्राह्मणो गृहीतनिर्वापः समायातो यावत्पश्यति तावत्पुत्रशोकोऽभितप्ता ब्राह्मणी प्रलपति- भो भो लोभात्मन्! लोभाभिभूतेन त्वया न कृतं मद्वचः । तदनुभव साम्प्रतं पुत्रमृत्युदुःखवृक्षफलम् । अथवा साध्विदमुच्यते-

अतिलोभो न कर्त्तव्यः कर्त्तव्यस्तु प्रमाणतः।

अतिलोभजदोषेण जम्बुको निधनं गतः ॥5.21॥

**ब्राह्मण आह- किमेतत्?**

**सा प्राह-**

इसी बीच, ब्राह्मण भिक्षा माँगने का कार्य करके आ गया। जब आकर देखता है तब रोती हुई ब्राह्मणी कहती है- हे लोभी ब्राह्मण! तुमने लोभ के कारण मेरा कहना नहीं माना। अब अपने पुत्र (पुत्र-तुल्य नेवले) की मृत्यु के मरने के दुःख के फल का अनुभव कीजिए। उचित ही बताया जाता है- यदि मनुष्य लोभ पूरी तरह न ही छोड़े, तो भी उसे अधिक लोभ नहीं ही करना चाहिए। क्योंकि अधिक लोभ करने वाले के मस्तक पर चक्र (पहिया) ही घूमता है।

ब्राह्मण ने पूछा- यह कथा कैसे है?

ब्राह्मणी कहने लगी-

(आगे की कथा पाठ 3 में दी गई है)



**बोध-प्रश्न**

1. 'ब्राह्मणी-नकुल' कथा में ब्राह्मणी के पति का नाम है-  
 (क) सोमशर्मा (ख) देवशर्मा  
 (ग) रविशर्मा (घ) पीयूषशर्मा
2. ब्राह्मणी अपने पुत्र को सुलाकर, उसकी रक्षा के लिए किसे नियुक्त करके जाती है-  
 (क) बड़े पुत्र को (ख) पति को  
 (ग) सखि को (घ) सास को
3. ब्राह्मणी पानी लाने गई-  
 (क) तालाब (ख) कुआँ  
 (ग) नलकूप (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं
4. ब्राह्मणी का पति किस कार्य के लिए चला गया-  
 (क) नगर में भ्रमण करने (ख) खेलने  
 (ग) भिक्षा लेने (घ) मित्र से मिलने
5. नेवले के मुख पर रक्त लगा था-  
 (क) ब्राह्मणी के पुत्र का (ख) सर्प का  
 (ग) दूसरे नेवले का (घ) अपने ही घाव का

**2.6 सारांश**

प्रिय विद्यार्थियो! आपने इस पाठ में 'ब्राह्मणी-नकुल' कथा पढ़ी। इस कथा को पढ़कर आपने जाना कि ब्राह्मणी ने उस नेवले को मार दिया जिसने उसके बेटे की सर्प से रक्षा की। इस प्रकार उसने अपना हित करने वाले के ही प्राण हर लिये। उसके मन में यह शंका पहले से थी कि वह नेवला अपने जाति स्वभाव के कारण कभी उसके बेटे को हानि न पहुँचा दे। जब ब्राह्मणी पानी लेकर आती है तो घर के द्वार पर नेवले के मुख पर रक्त लगा हुआ देखकर क्रोध करती है। इस प्रकार नेवले के मुख पर रक्त से उसके पूर्वाग्रह को बल मिल जाता है और आवेश में आकर उस पर

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री





टिप्पणी

पानी का भरा घड़ा पटक देती है। जब घर के अन्दर जाकर देखती है तो अपने बेटे को सकुशल सोता हुआ पाती है। उसके पास सर्प के शरीर के टुकड़े व रक्त पाती है। इससे पूरा परिदृश्य स्पष्ट होता है और अपने पहले वाले निष्कर्ष से भिन्न निष्कर्ष पर पहुँचती है, पहले नेवले को दोषी व अपराधी के रूप में देख रही थी, अब स्वयं को ही दोषी स्वीकार कर पश्चाताप करने लगी। धैर्यपूर्वक तथ्यों को जाने बिना सत्य निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाते हैं जो जीवन में हानिकारक निर्णय करवा देता है। फलस्वरूप पश्चाताप व दुःख होता है। इसलिए प्रथमदृष्ट्या प्राप्त तथ्यों से ही निष्कर्ष न निकालकर धैर्यपूर्वक परीक्षण करके निष्कर्ष तक पहुँचना चाहिए।

## 2.7 कठिन शब्दावली

- अधिष्ठान – नगर
- प्रसूय – जन्म देकर
- सुतवत्सला – बेटे से स्नेह करने वाली
- दारकवत् – अपने पुत्र के समान
- स्तन्यम् – दुग्ध
- अभ्यङ्गं – तैल लगाना
- मर्दनम् – दबाना या मलना
- विरुद्धम् – अनिष्ट
- दुर्विनीत – अशिक्षित
- किल – निश्चय ही
- सौहृदयस्य – स्नेह का
- रक्षितुः – रक्षक का
- लोकाः – जनसमुदाय
- जलार्थम् – जल लाने के लिए
- तडागे – तालाब की ओर
- रुधिरक्लिन्नमुख – रुधिर से गीला मुख



- चिक्षेप – गिराया
- व्यापाद्य – मारकर
- प्रलपन्ती – रोती हुई
- लोभात्मन – लोभी
- लोभाभिभूत – लोभ से दबा हुआ
- मद्बचः – मेरी बात

## 2.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (ख)
3. (क)
4. (ग)
5. (ख)

## 2.9 अभ्यास प्रश्न

1. 'ब्राह्मणी-नकुल' कथा को अपने शब्दों में संक्षेप में लिखें।
2. 'ब्राह्मणी-नकुल' कथा की व्यावहारिक जीवन में उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए।

## 2.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, गुरुप्रसादशास्त्री व सीतारामशास्त्री (टीकाकार), बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019 ।
- पञ्चतन्त्र, विष्णुशर्मा, ज्वाला प्रसाद मिश्र (टीकाकार), खेमराज श्री कृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बोम्बे, 1910 ।



टिप्पणी

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, श्यामाचरणपाण्डेय (व्याख्याकार), मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975 ।

## 2.11 सहायक अध्ययनसामग्री

- *Pancatantram* (ed. and trans.) by M.R. Kale, Motilal Banarsidas, Delhi, 1999.
- *Pancatantram* (trans.) by Penguin Classics, Penguin Books.



## लोभाविष्टचक्रधरकथा

**डॉ. ओम प्रकाश**

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,  
डी.डी.सी.ई., सी.ओ.एल., एस.ओ.एल.,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

### संरचना

- 3.1 अधिगम के उद्देश्य
- 3.2 प्रस्तावना
- 3.3 कथामुख
- 3.4 लोभाविष्ट चक्रधर प्रकरण
- 3.5 कथान्त
- 3.6 सारांश
- 3.7 कठिन शब्दावली
- 3.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 3.9 अभ्यास प्रश्न
- 3.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 3.11 सहायक अध्ययनसामग्री

### 3.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप-

- पञ्चतन्त्र की लोभाविष्टचक्रधर कथा को संस्कृत व हिन्दी दोनों भाषाओं में जानेंगे तथा अपने शब्दों में प्रकट कर सकेंगे।
- कथा के माध्यम से संस्कृत भाषा के ज्ञान का बोध और अधिक स्पष्ट पाएँगे।
- मनुष्य को जीवन में निर्णय लेते समय लोभ नहीं करना चाहिए, इस शिक्षा को ग्रहण करेंगे।



टिप्पणी

### 3.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत पाठ में आप पञ्चतन्त्र की 'लोभाविष्टचक्रधरकथा' पढ़ेंगे। यह कथा ऐसे चार मित्रों की है जो दरिद्रता से दुःखी होकर इसके नाश के लिए धन प्राप्ति हेतु अपने नगर से बाहर निकलते हैं। धन की प्राप्ति का एक मार्ग या उपाय मिलता है। उस मार्ग पर चलकर उन्हें जो मिलता है उससे तीन मित्र तो सन्तुष्ट हो जाते हैं लेकिन एक और अधिक प्राप्ति के लोभ में आकर सीमा से आगे बढ़ जाता है। तब सीमा से आगे बढ़ने पर और अधिक धन प्राप्ति के विपरीत उसके सिर पर घूमता चक्र लग जाता है जिससे बहुत पीड़ा होती है। इस प्रकार वह लोभ की मनोवृत्ति के वशीभूत होकर दुःख को प्राप्त होता है। आइये! इस कथा को विस्तार से जानते हैं।

### 3.3 कथामुख

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणपुत्राः परस्परं मित्रतां गता वसन्ति स्म । ते चापि दारिद्र्योपहताः परस्परं मन्त्रं चक्रुः- हो धिगियं दरिद्रता! उक्तं च-

**हिन्दी अनुवाद-** किसी नगर में चार ब्राह्मण पुत्र मित्र बनकर रहते थे। उन्होंने दरिद्रता से घिरकर परस्पर मन्त्रणा की- धिक्कार है इस दरिद्रता को। कहा भी गया है-

वरं वनं व्याघ्रगजाऽऽदिसेवितं  
जनेन हीनं बहुकण्टकाऽऽवृतम्।  
तृणानि शय्या परिधान-वल्कलं  
न बन्धुमध्ये धनहीनजीवितम् ॥5.22 ॥

**हिन्दी अनुवाद-** तिनकों की शय्या, छाल के वस्त्र पहनते हुए अनेक काँटों से ढके हुए, मनुष्यों से रहित, बाघ, हाथी आदि से युक्त वन में रहना श्रेष्ठ है किन्तु बन्धुजनों के मध्य निर्धन होकर रहना उचित नहीं।

तथा च-

स्वामी द्वेष्टि सुसेवितोऽपि सहसा प्रोज्झन्ति सद्धान्धवाः  
राजन्ते न गुणास्त्यजन्ति तनुजाः स्फारीभवन्त्यापदः ।



भार्या साधु सुवंशजापि भजते नो यान्ति मित्राणि च

न्यायारोपितविक्रमाण्यपि नृणां येषां न हि स्याद्धनम् ॥5.23॥

**हिन्दी अनुवाद-** निर्धन व्यक्ति से- स्वामी अच्छे से सेवा किये जाने पर भी द्वेष करता है, निकट सम्बन्धी भी अचानक त्याग देते हैं, अच्छे गुण भी शोभा नहीं पाते (अर्थात् अच्छे गुणों का प्रभाव भी नहीं होता)। सन्तानें भी त्याग देती हैं। विपत्तियाँ बढ़ जाती हैं।

शूरः सुरूपः सुभगश्च वाग्मी

शस्त्राणि शास्त्राणि विदाङ्करोतु।

अर्थ विना नैव यशश्च मानं

प्राप्नोति मर्त्योऽत्र मनुष्यलोके ॥5.24॥

**हिन्दी अनुवाद-** इस संसार में (यदि) मनुष्य योद्धा, सुन्दर, सौभाग्यशाली, बोलने में कुशल, शस्त्रों व शास्त्रों का ज्ञाता भी हो (तब भी वह) धन के बिना यश व सम्मान प्राप्त नहीं करता।

तानीन्द्रिन्याण्यविकलानि तदेव नाम

सा बुद्धिरप्रतिहता वचनं तदेव।

अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः स एव

बाह्यः क्षणेन भवतीति विचित्रमेतत् ॥5.25॥

**हिन्दी अनुवाद-** यह आश्चर्य की बात है- मनुष्य की वे ही स्वस्थ इन्द्रियाँ हैं, वही नाम है, वही स्वस्थ बुद्धि है, वे ही वचन हैं किन्तु धन की ऊर्जा से रहित व्यक्ति (निर्धन) लोगों के समूह से बाहर हो जाता है।

**‘तद्गच्छामः कुत्रचिदर्थाय ।’** इति सम्मन्य स्वदेशं पुरं च स्वसुहृत्सहितं गृहं च परित्यज्य प्रस्थिताः । अथवा साध्विदमुच्यते-

सत्यं परित्यजति मुञ्चति बन्धुवर्गं

शीघ्रं विहाय जननीमपि जन्मभूमिम् ।

सन्त्यज्य गच्छति विदेशमभीष्टलोकं

चिन्ताकुलीकृतमतिः पुरुषोऽत्र लोके ॥5.26॥

**हिन्दी अनुवाद-** ‘इसलिए हम सभी धन के लिए कहीं चलते हैं।’ ऐसी आपस में चर्चा करके वे सभी अपने देश को, अपने नगर को, अपने बान्धवों सहित अपने घर को छोड़कर चल दिये।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



टिप्पणी

ठीक ही कहा जाता है- इस लोक में मनुष्य धन की चिन्ता से व्याकुल होकर सत्य को छोड़ देता है, बन्धुओं को छोड़ देता है, जन्मभूमि व माता को भी छोड़कर विशेष रूप से इच्छित (धन) को पाने के लिए परदेश चला जाता है।

### 3.4 लोभाविष्ट चक्रधर प्रकरण

एवं क्रमेण गच्छन्तोऽवन्तीं प्राप्ताः । तत्र सिप्राजले कृतस्नानाः महाकालं प्रणम्य यावन्निर्गच्छन्ति तावत्भैरवानन्दो नाम योगी संमुखो बभूव । ततस्तं ब्राह्मणोचितविधिना सम्भाव्य तेनैव सह तस्य मठं जग्मुः । अथ तेन पृष्टाः कुतो भवन्तः समायाताः? क्व यास्यथ? किं प्रयोजनम्?

ततस्तैरभिहितम्बयं सिद्धियात्रिकाः । तत्र यास्यामो यत्र धनाप्तिर्मृत्युर्वा भविष्यतीत्येष निश्चयः । उक्तं च-

**हिन्दी अनुवाद-** इस प्रकार चलते हुए उज्जैन पहुँचे। वहाँ सिप्रा नदी के जल में स्नान करके, महाकाल को प्रणाम करके, जब बाहर निकल रहे थे तब भैरवानन्द नाम का योगी सामने आया। तब उसको ब्राह्मण के लिए उपयुक्त विधि से सत्कार करके उसके साथ ही उसके मठ को गये। अब उसके द्वारा पूछा गया – आप सभी कहाँ से आये हैं? कहाँ जायेंगे? (यात्रा का) क्या प्रयोजन है?

तब उनके द्वारा कहा गया - हम सिद्धि के लिए यात्रा करने वाले हैं। वहाँ जायेंगे जहाँ धन प्राप्ति होगी, या मृत्यु होगी, ऐसा निश्चय किया है। कहा भी गया है-

**दुष्प्राप्याणि बहूनि च लभ्यन्ते वाञ्छितानि द्रविणानि ।**

**अवसरतुलिताभिरलं तनुभिः साहसिकपुरुषाणाम् ॥5.27॥**

**हिन्दी अनुवाद-** साहसी पुरुष कठिनता से प्राप्त करने योग्य अनेक इच्छित द्रव्यों को अपनी देह (प्राणों) का त्याग करके भी प्राप्त करने के निश्चय द्वारा प्राप्त कर लेते हैं।

तथा च-

**पतति कदाचित्रभसः खाते पातालतोऽपि जलमेति ।**

**दैवमचिन्त्यं बलवद्बलवान्ननु पुरुषकारोऽपि ॥5.28॥**

**हिन्दी अनुवाद-**

और भी-



यद्यपि भाग्य बलवान है किन्तु निश्चित ही भाग्य से परिश्रम रूप पुरुषार्थ भी बलवान है। (जैसे-) कभी आकाश से जल गिरता है, कभी परिश्रम करके खोदने से पाताल से भी जल आ जाता है।

**अभिमतसिद्धिरशेषा भवति हि पुरुषस्य पुरुषकारेण ।**

**दैवमिति यदपि कथयसि पुरुषगुणः सोऽप्यदृष्टाख्यः ॥5.29॥**

**हिन्दी अनुवाद-** मनुष्य की इच्छित सिद्धि परिश्रम से ही होती है। जिसे मनुष्य का भाग्य कहा जाता है वह भी कर्मों का संचित फल है।

**द्वयमतुलं गुरुलोकात्तृणमिव तुलयन्ति साधु साहसिकाः ।**

**प्राणानद्भुतमेतच्चार्तिं चरितं ह्युदाराणाम् ॥5.30॥**

**हिन्दी अनुवाद-** जगत् में दो विशेष (चीजें) हैं- उत्साही सज्जन व्यक्तियों का चरित (जो) अवसर आने पर अपने प्राणों को भी तिनके के समान तोल देते हैं अर्थात् अवसर आने पर प्राणों की भी आहुति देते हैं। (दूसरा-) उदार-दानवीरों का चरित्र (जो) अपना सब कुछ देने को उद्यत रहते हैं।

**क्लेशस्याङ्गमदत्त्वा सुखमेव सुखानि नेह लभ्यन्ते ।**

**मधुभिन्मथनायस्तैराश्लिष्यति बाहुभिर्लक्ष्मीम् ॥5.31॥**

**हिन्दी अनुवाद-** यहाँ (संसार में) शरीर के अङ्गों को कष्ट दिए बिना, बिना परिश्रम किए, सुख नहीं मिलता है। भगवान् विष्णु समुद्र का मन्थन करने से परिश्रान्त बाहुओं से ही लक्ष्मी का आलिङ्गन कर सके। (समुद्रमन्थन से ही लक्ष्मी प्राप्त हुई।)

**तस्य कथं न चला स्यात्पत्नी विष्णोर्नृसिंहकस्यापि**

**मासांश्चतुरो निद्रां यः सेवति जलगतः सततम् ॥5.32॥**

**हिन्दी अनुवाद-** पुरुषों में श्रेष्ठ कहलाने वाले विष्णु भगवान् की भी पत्नी (लक्ष्मी) क्यों न चञ्चला हो, जो (विष्णु) चार महिने (श्रावण से कार्तिक मास तक) समुद्र में जाकर निरन्तर निद्रा का सेवन करते हैं अर्थात् उद्योग नहीं करते।

**दुरधिगमः परभागो यावत्पुरुषेण साहसं न कृतम् ।**

**जयति तुलामधिरूढो भास्वानिह जलदपटलानि ॥5.33॥**

**हिन्दी अनुवाद-** मनुष्य के द्वारा श्रेष्ठपद प्राप्त करना कठिन है, जब तक वह साहस न करे। (देखो) भगवान् सूर्य तुलाराशि पर आरुढ़ होकर ही मेघ समूह को नष्ट करते हैं।





टिप्पणी

तत्कथ्यतामस्माकं कश्चित्धनोपायो विवरप्रदेश-शाकिनीसाधन-श्मशानसेवन-महामांसविक्रय-साधकवर्तिप्रभृतीनामेकतम इति । अद्भुतशक्तिर्भवान् श्रूयते । वयमप्यतिसाहसिकाः । उक्तं च-

**हिन्दी अनुवाद-** इसलिए हमें कोई धनप्राप्ति का साधन बतायें- पाताल में प्रवेश, भूत-प्रेत डाकिनी-शाकिनी का साधन, श्मशान का सेवन, महामांस विक्रय, अञ्जन-गुटिका आदि- इनमें से कोई। आप विशेष शक्ति से युक्त हैं, ऐसा सुना जाता है। हम भी बहुत पराक्रम वाले हैं। कहा भी है-

**महान्त एव महतामर्थं साधयितुं क्षमाः।**

**ऋते समुद्रादन्यः को बिभर्ति वडवानलम्॥5.34॥**

भैरवानन्दोऽपि तेषां सिद्ध्यर्थं बहूपायं सिद्धवर्तिचतुष्टयं कृत्वार्ययत्। आह च गम्यतां हिमालयदिशि । तत्र सम्प्राप्तानां यत्र वर्तिः पतिष्यति, तत्र निधानमसन्दिग्धं प्राप्यस्व। तत्र स्थानं खनित्वा निधिं गृहीत्वा व्याघुट्यताम्।

**हिन्दी अनुवाद-** महान् व्यक्ति ही महान् लोगों के कार्य साधने में सक्षम होते हैं। (जैसे) समुद्र के अतिरिक्त कौन बड़वानल को धारण कर सकता है।

भैरवानन्द ने भी उनकी सिद्धि (धनप्राप्ति) के लिए अनेक उपायों (बड़े परिश्रम) से चार सिद्धवर्तिकाएँ (बटियाँ, या बटेर, चिड़िया, या गेंद) बनाकर उन्हें दी और कहा कि हिमालय की दिशा (उत्तर) में चले जाइये। वहाँ पहुँचने पर जहाँ ये वर्तिकाएँ (बट्टी या गेंद) गिरेंगी, वहाँ खोदने पर धन का भण्डार निश्चित रूप से मिलेगा। वहाँ के स्थान को खोदकर धन के भण्डार को लेकर वापिस चले आना।

तथानुष्ठिते तेषां गच्छतामेकतमस्य हस्ताद्वर्तिर्निपपात। अथासौ यावत्तं प्रदेशं खनति तावत्ताम्रमयी भूमिः। ततस्तेनाभिहितमहो, गृह्यतां स्वेच्छया ताम्रम्।

**अन्ये प्रोचुः-** भो मूढ़! किमनेन क्रियते यत्प्रभूतमपि दारिद्र्यं न नाशयति । तदुत्तिष्ठ अग्रतो गच्छामः।

सोऽब्रवीत्यान्तु भवन्तः। नाहमग्रे यास्यामि । एवमभिधाय ताम्रं यथेच्छया गृहीत्वा प्रथमो निवृत्तः ।

ते त्रयोऽपि अग्रे प्रस्थिताः। अथ किञ्चिन्मात्रं गतस्याग्रेसरस्य वर्तिर्निपपात। सोऽपि यावत्खनितुमारब्धस्तावद्रूप्यमयी क्षितिः। ततः प्रहर्षितः प्राह, यत्भो भो, गृह्यतां यथेच्छया रूप्यम् । नाग्रे गन्तव्यम्।



तावूचतुः- 'भोः, पृष्ठतस्ताम्रमयी भूमिः। अग्रतो रूप्यमयी। तन्नूनमग्रे सुवर्णमयी भविष्यति। किं चानेन प्रभूतेनापि दारिद्र्यनाशो न भवति। तदावामग्रे यास्यावः।

**हिन्दी अनुवाद-** जैसा बताया-वैसा करने पर, जाते हुए उनमें से एक के हाथ से वर्ति गिर गई। अब वह जितने क्षेत्र को खोदता है उतनी भूमि ताँबे से भरी हुई मिली। तब उसने कहा – 'अहो! अपनी इच्छा के अनुसार ताँबा ग्रहण करो'।

अन्यों ने कहा- अरे मूर्ख! इससे क्या करेंगे क्योंकि बहुत अधिक भी दरिद्रता का नाश नहीं करता है। अतः उठो! आगे चलें। वह (पहला) बोला- आप सभी आगे जाइए, मैं आगे नहीं जाऊँगा। ऐसा बोलकर इच्छानुसार ताँबा लेकर पहला लौट आया।

उन तीनों ने आगे प्रस्थान किया। अब कुछ दूर जाने पर आगे वाले के हाथ से वर्ति गिर गई। उसने भी जितना खोदना प्रारम्भ किया, उतनी चाँदी से भरपूर भूमि मिली। तब प्रसन्नता से कहा कि – अहो! जितनी चाहो चाँदी ग्रहण करो। आगे नहीं जाना चाहिए।

वे दोनों बोले – अरे! पीछे ताम्र से भरपूर भूमि थी। उससे आगे चाँदी से परिपूर्ण। तो अवश्य ही आगे सोने से भरपूर भूमि (खान) होगी। और इसकी अधिक मात्रा से (चाँदी से) भी दरिद्रता का नाश नहीं होता है। इसलिए हम दोनों आगे जायेंगे।

सोऽपि स्वशक्त्या रूप्यमादाय निवृत्तः। अथ तयोरपि गच्छतोरेकस्याग्रे वर्तिः पपात। सोऽपि प्रहृष्टो यावत्खनति, तावत्सुवर्णभूमिं दृष्ट्वा द्वितीयं प्राह- भो, गृह्यतां स्वेच्छया सुवर्णम्। सुवर्णादन्यत्र किञ्चिदुत्तमं भविष्यति।

स प्राह मूढ! न किञ्चिद्वेत्ति। प्राक्ताम्रं, ततो रूप्यं, ततः सुवर्णम्। तन्नूनमतः परं रत्नानि भविष्यन्ति। येषामेकतमेनापि दारिद्र्यनाशो भवति। तदुत्तिष्ठ, अग्रे गच्छावः। किमनेन भारभूतेनापि प्रभूतेन?

स आह- गच्छतु भवान्। अहमत्र स्थितस्त्वां प्रतिपालयिष्यामि। तथानुष्ठिते सोऽपि गच्छन्नेकाकी, ग्रीष्मार्कप्रतापसन्तप्ततनुः पिपासाकुलितः सिद्धिमार्गच्युत इतश्चेतश्च बभ्राम्। अथ भ्राम्यन्, स्थलोपरि पुरुषमेकं रुधिरप्लावितगात्रं भ्रमच्चक्रमस्तकमपश्यत्। ततो द्रुततरं गत्वा तमवोचत्भोः! को भवान्? किमेवं चक्रेण शिरसि तिष्ठसि? तत्कथय मे यदि कुत्रचिज्जलमस्ति।

एवं तस्य प्रवदतस्तच्चक्रं तत्क्षणात्तस्य शिरसो ब्राह्मणमस्तके चटितम्।

स आह- भद्र, किमेतत्?

स आह ममाप्येवमेतच्छिरसि चटितम्?



टिप्पणी

स आह तत्कथय, कदैतदुत्तरिष्यति? महती मे वेदना वर्तते ।

स आह यदा त्वमिव कश्चिदधृतसिद्धवर्तिरिवमागत्य, त्वामालापयिष्यति तदा तस्य मस्तकं चटिष्यति ।

**हिन्दी अनुवाद-** वह भी अपनी क्षमता के अनुसार चाँदी लेकर लौट गया। अब आगे जाते हुए उन दोनों में से भी एक की वर्ति गिर गई। वह भी प्रसन्न होकर जितना खोदता है उतनी सोने से युक्त भूमि को देखकर दूसरा बोला- हे, अपनी इच्छा से सोने को ग्रहण कीजिए। सोने से उत्तम कुछ नहीं होगा।

वह बोला- मूर्ख! कुछ नहीं जानते हो। पहले ताम्र, उसके पश्चात् चाँदी, उसके उपरान्त सोना। इसलिए इससे आगे रत्न मिलेंगे। जिनमें से एक से ही दरिद्रता का नाश हो जायेगा। इसलिए उठो, आगे चलते हैं। इसकी इतनी मात्रा के भार रूप से भी क्या?

वह बोला- आप जाइये। मैं यहाँ ठहरकर तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा।

वैसा करने पर वह अकेला जाता हुआ, गर्मी की किरणों के प्रभाव से तपे हुए शरीर वाला, प्यास से व्याकुलित, सिद्धिमार्ग से भटका हुआ इधर-उधर भ्रमण किया।

अब घूमते हुए, समतल प्रदेश में रुधिर से सने हुए शरीर वाले एक व्यक्ति जिसके शिर पर चक्र घूम रहा था, उसे देखा। तब तेजी से जाकर उसको पूछा- अहो! आप कौन हैं? शिर पर यह चक्र कैसे स्थित है? यदि कहीं जल है तो मुझे बताइये।

ऐसा बोलने पर उसी क्षण वह चक्र उसके शिर पर चढ़ गया।

उसने कहा – भले व्यक्ति! यह क्या है?

उसने कहा (उत्तर दिया)- मेरे शिर पर भी ऐसी ही चढ़ा था।

उसने कहा (पूछा)- बताइये, यह कैसे उतरेगा? मुझे बहुत पीड़ा हो रही है। वह बोला जब सिद्धवर्ति को धारण किया हुआ कोई इस प्रकार आकर तुमसे बात करेगा तब उसके मस्तक पर चढ़ जायेगा।

स आह कियान् कालस्तवैवं स्थितस्य?

स आह- साम्प्रतं को राजा धरणीतले?

स आह- वीणावादनपटुः वत्सराजः।

स आह अहं तावत्कालसङ्ख्यां न जानामि। परं यदा रामो राजासीत्तदाहं दारिद्र्योपहतः सिद्धवर्तिमादायानेन पथा समायातः। ततो मयान्यो नरो मस्तकधृतचक्रो दृष्टः, पृष्टश्च । ततश्चैतज्जातम् ।



**हिन्दी अनुवाद-** उसने (ब्राह्मण ने) पूछा कि 'तुम कितने समय से यहाँ हो? उसने कहा- इस समय पृथ्वी पर राजा कौन है? उसने (ब्राह्मण ने) कहा- वीणावत्सराज (उदयन) इस समय पृथ्वी पर राज्य करते हैं। (पाण्डववंशी ये वीणावत्सराज तीन हजार वर्ष पूर्व प्रयाग के पास कौशाम्बी में राज्य करते थे।)

तब उसने (पहिले चक्रधारी ने) कहा- मैं समय गणना नहीं जानता हूँ किन्तु जब राम राजा थे तब मैं दरिद्रता से पीड़ित होकर सिद्धवर्ति (सिद्धगुटिका) लेकर इस मार्ग से आया था। तब मैंने एक अन्य पुरुष के मस्तक पर चक्कर धरे हुए देखा और पूछा तब से यह हो गया अर्थात् यह चक्कर मेरे शिर पर चढ़ गया।

### 3.5 कथान्त

स आह- 'भद्र! कथं तदैवं स्थितस्य भोजनजलप्राप्तिरासीत्?'

स आह- 'भद्र! धनदेन निधानहरणभयात्सिद्धानामेतच्चक्रपतनरूपं भयं दर्शितम्। तेन कश्चिदपि नागच्छति। यदि कश्चिदायाति, स क्षुत्पिपासानिद्रारहितो जरामरणवर्जितः केवलमेवं वेदनामनुभवति इति। तदाज्ञापय मां स्वगृहाय।' इत्युक्त्वा गतः।

अथ तस्मिंश्चिरयति स सुवर्णसिद्धिस्तस्यान्वेषणपरस्तत्पदपङ्क्त्या

यावत्किञ्चिद्वनान्तरमागच्छति तावद्बुधिरप्लावितशरीरस्तीक्ष्णचक्रेण मस्तके भ्रमता सवेदनः, कण्ठपविष्टस्तिष्ठति [इति ददर्श]। ततः समीपवर्तिना भूत्वा सबाष्पं पृष्टः- 'भद्र! किमेतत्?' स आह- 'विधिनियोगः।' स आह- 'कथं तत्? कथय कारणमेतस्य।' सोऽपि तेन पृष्टः, सर्वं चक्रवृत्तान्तमकथयत्।

तच्छ्रुत्वाऽसौ तं विगर्हयन्निरदमाह- 'भोः! निषिद्धस्त्वं मयाऽनेकशो, न शृणोषि मे वाक्यम्। तत्किं क्रियते? विद्यावानपि कुलीनोऽपि बुद्धिरहितः। अथवा साध्विदमुच्यते-

'वरं बुद्धिर्न सा विद्या विद्याया बुद्धिरुत्तमा।

बुद्धिहीना विनश्यन्ति, यथा ते सिंहकारकाः' ॥5.35॥

चक्रधर आह- 'कथमेतत्?' सुवर्णसिद्धिराह-

**हिन्दी अनुवाद-** उसने (ब्राह्मण ने) कहा- महाशय! तो इस प्रकार खड़े रहने पर भोजन पानी कैसे प्राप्त होता था? उसने (चक्रधारी ने) बोला- 'महोदय! कुबेर जी ने 'निधियों (खजाना) को कोई न ले जा सके' इस विचार से सिद्धों के लिए यह चक्र का भय दिखाया है। इससे (डर से) कोई (इधर)

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



टिप्पणी

नहीं आता है। यदि कोई आता है, वह भूख, प्यास व निद्रा से रहित होकर, तथा वृद्धावस्था और मृत्यु के भय से रहित होकर, (चक्रभ्रमण से उत्पन्न) इस पीड़ा का अनुभव करता है। तब मुझे अपने घर जाने की आज्ञा दीजिए।' ऐसा कहकर चला गया।

और उसको लम्बा समय लगने पर वह स्वर्णसिद्धि उसको पैरों के निशानों से ढूँढते हुए थोड़ी देर में आया, तो उसके वह रक्त से रञ्जित शरीर वाले के शिर पर तेज धार वाला चक्र घूमते हुए देखा, पीड़ा के मारे कराहते हुए खड़ा है। तब पास में जाकर आँसूओं बहाते हुए पूछा- अरे भाई! यह क्या है?

उसने (चक्रधर ने) कहा- 'यह विधि का विधान है।' उसने कहा- 'वह कैसे? इसका कारण बताइए।' जो भी उसके द्वारा पूछा गया, सारा चक्रवृत्तान्त कह दिया।

वह सुनकर यह उसकी निन्दा करते हुए बोला- अहो! मेरे द्वारा अनेक बार मना किया गया, (किन्तु) मेरे वाक्य को नहीं सुनते हो। उसका क्या किया जाये? विद्यावान व कुलीन होते हुए भी बुद्धिरहित हो। अथवा ठीक ही कहा गया है-

'विद्या की अपेक्षा बुद्धि श्रेष्ठ है, विद्या से बुद्धि उत्तम है। विद्यारहित व्यक्ति विनाश को प्राप्त करते हैं जैसे सिंहकारक॥

चक्रधर ने पूछा - यह कथा कैसे है? सुवर्णसिद्धि ने कहा-

#### बोध-प्रश्न

- चार ब्राह्मण-मित्र निर्धनता से दुःखी होकर किस नगर में पहुँचे-  

(क) वाराणसी	(ख) नालन्दा
(ग) उज्जैन	(घ) तक्षशिला
- सिप्रा नदी निम्नलिखित में से किस स्थान से होकर जाती है-  

(क) उज्जैन	(ख) नालन्दा
(ग) वाराणसी	(घ) तक्षशिला
- मनुष्यों से रहित, बाघ, हाथी आदि से युक्त वन में रहना श्रेष्ठ है किन्तु बन्धुजनों के मध्य... होकर रहना उचित नहीं-  

(क) क्रोधित	(ख) भयभीत
(ग) शान्त	(घ) निर्धन



4. ....बिना नैव यशश्च मानं प्राप्नोति मर्त्योऽत्र मनुष्यलोके-

(क) ज्ञानम् (ख) गौरवम्

(ग) धनम् (घ) धैर्यम्

5. 'ते चापि दारिद्र्योपहताः परस्परं मन्त्रं चक्रुः' – इसमें 'मन्त्रं चक्रुः' का अर्थ है-

(क) चर्चा किये (ख) उपदेश किये

(ग) अवलोकन किये (घ) उपर्युक्त सभी

### 3.6 सारांश

प्रिय विद्यार्थियो! आपने इस पाठ में 'लोभाविष्टचक्रधर' कथा पढ़ी। जैसा कि इस कथा के नाम में ही इस कहानी के सार का संकेत हो रहा है- लोभ से आविष्ट (वशीभूत) हो कर चक्र को धारण किये जाने की कथा। आपने इस पाठ में पढ़ा ही है कि चार ब्राह्मण मित्र जब निर्धनता से दुःखी होकर धन प्राप्ति के लिए अपने घर से निकलकर उज्जैन पहुँचते हैं तो धन की प्राप्ति का उपाय मिलता है। उस उपाय के अनुसार चार वर्तिकाएँ लेकर उत्तर की ओर गमन करने पर जिसके हाथ से जहाँ वर्ति गिर जाये वहीं खुदाई करने से धन मिलेगा। जहाँ-जहाँ उनकी वर्तिकाएँ गिरती गईं वहाँ-वहाँ खुदाई की और क्रमशः ताँबे, चाँदी व सोने की प्राप्ति हुई। एक मित्र के अतिरिक्त सभी ने अपनी अपनी आवश्यकता के अनुसार ताँबा, चाँदी व सोना ग्रहण किया किन्तु एक मित्र इतने में सन्तुष्ट नहीं हुआ और रत्नों की प्राप्ति के लोभ में आगे बढ़ गया। आगे बढ़ने पर उसने एक ऐसा व्यक्ति देखा जो रक्त से सना हुआ था और उसके शिर पर एक चक्र घूम रहा था जिससे उसे बहुत पीड़ा हो रही थी। इसे देखकर जब वह मित्र चक्रधारी के पास में जाकर पूछता है कि आपको यह कैसे हो गया है तो वह चक्कर उस मित्र के सिर पर चढ़ गया।

इस प्रकार प्राप्त धन से सन्तुष्ट न होकर लोभ के कारण आगे बढ़ जाने से वह चक्र उस मित्र के शिर पर चढ़ गया और वह दुःखी हुआ। इस कथा से शिक्षा मिलती है कि अधिक लोभ नहीं करना चाहिए नहीं तो जीवन का मूल स्वरूप आनन्द ही लुप्त हो जाता है और व्यक्ति पर दुःख की चक्करी घूमती रहती है।



टिप्पणी

### 3.7 कठिन शब्दावली

- वसन्ति स्म – रहते थे
- उपहताः – दुःखी
- मन्त्रं चक्रुः – मन्त्रणा की
- वरम् – श्रेष्ठ
- बहुकण्टाऽऽवृतम् – अनेक काँटों से ढका हुआ
- परिधानवल्कलम् – वृक्षों की छाल के वस्त्र
- सहसा – अकस्मात्
- प्रोज्झन्ति – त्याग देते हैं
- स्फारी भवन्ति – बढ़ते हैं
- सुभगः – सौभाग्यशाली
- वाग्मी – वार्तालाप में कुशल
- विदाङ्करोतु – जानो
- मुञ्चति – त्याग देता है
- चिन्ताऽऽकुलीकृतमतिः – चिन्ता से ग्रस्त है बुद्धि जिसकी
- अर्थोष्मणा – धन की शक्ति से
- विरहित – विशेष अभाव युक्त
- कुत्रचित् – कहीं पर
- सम्मन्त्र्य – अच्छे से विचार करके
- स्वसुहृत् – अपने प्रिय व्यक्ति
- विहाय – छोड़कर
- सम्भाव्य – पूजन करके या अभिवादन करके
- जग्मुः – गये



- क - कहाँ
- यास्यथ - जायेंगे
- पतति - गिरता है
- कदाचित् - कभी
- नभसः - आकाश से
- खाते - खनन आदि श्रम से बना कुँआ आदि जल के स्रोत
- जलम् एति - जल आता है
- दैव - भाग्य
- पुरुषकार - परिश्रम रूप पुरुषार्थ
- अभिमत - अभीष्ट अर्थात् विशेष रूप से इच्छा की हुई
- अशेषा - पूर्ण
- पुरुषकारेण - पुरुषार्थ से
- दैवम् - भाग्य
- अदृष्ट - संचित कर्मों का फल
- मधुभिः - विष्णु
- बाहुभिः - भुजाओं के द्वारा
- आश्लिष्यति - आलिंगन करता है
- चला - चञ्चला
- नृसिंहक - नृसिंह अवतार लेने वाले अर्थात् विष्णु
- परभागः - विजय
- भास्वान् - सूर्य
- जलदपटलानि - बादलों के जाल
- विवरप्रवेश - पाताल में प्रवेश
- शाकिनीसाधनम् - यक्षिणी आदि साधन
- श्मशानसेवनम् - वेताल आदि को साधने के लिए श्मशान की उपासना





टिप्पणी

- महामांसविक्रय – अपने शरीर का बलिदान
- ऋते – के बिना
- बिभर्ति – धारण करता है
- वडवानल – समुद्र में लगने वाली अग्नि
- निधानम् – भूमि में गड़ा हुआ धन
- व्याघुट्यताम् – लौट के चले आना
- तथानुष्ठिते – वैसा व्यवहार करने पर
- अग्रेसरस्य – आगे जाने वाले का
- ताम्रमयी – ताँबे की बहुलता से युक्त
- रूप्यम् – रजत (चाँदी)
- प्रभूत – अत्यधिक
- पपात – गिर गया
- पिपासाकुलितः – प्यास से व्याकुल
- चटितम् – चढ़ गया
- आलापयिष्यति – बात करेगा
- कियान् – कितना
- साम्प्रतम् – इस समय
- पटुः – कुशल
- धनदेन – कुबेर से
- चिरयति – विलम्ब करते रहने पर
- सवेदनः – पीड़ा से युक्त
- क्णन् – विलाप करते हुए
- सबाष्पम् – अश्रु सहित
- विगर्हयन् – निन्दा करते हुए

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



### 3.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (क)
3. (घ)
4. (ग)
5. (क)

### 3.9 अभ्यास प्रश्न

1. 'लोभाविष्ट-चक्रधर' कथा को अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'लोभाविष्ट-चक्रधर' कथा की शिक्षा पर टिप्पणी लिखिए।
3. 'लोभाविष्ट-चक्रधर' कथा के अनुसार संसार में धन के महत्त्व पर टिप्पणी लिखिए।

### 3.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, गुरुप्रसादशास्त्री व सीतारामशास्त्री (टीकाकार), बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019 ।
- पञ्चतन्त्र, विष्णुशर्मा, ज्वाला प्रसाद मिश्र (टीकाकार), खेमराज श्री कृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बोम्बे, 1910 ।
- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, श्यामाचरणपाण्डेय (व्याख्याकार), मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975 ।

### 3.11 सहायक अध्ययनसामग्री

- *Pancatantram* (ed. and trans.) by M.R. Kale, Motilal Banarsidas, Delhi, 1999.
- *Pancatantram* (trans.) by Penguin Classics, Penguin Books.



---

## इकाई-2

---

- पाठ 4 सिंहकारकब्राह्मण कथा  
पाठ 5 मूर्खब्राह्मणकथा  
पाठ 6 मत्स्यमण्डूककथा  
पाठ 7 रासभ-शृगाल-कथा





## सिंहकारकब्राह्मण कथा

**डॉ. ओम प्रकाश**

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,  
डी.डी.सी.ई., सी.ओ.एल., एस.ओ.एल.,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

### संरचना

- 4.1 अधिगम के उद्देश्य
- 4.2 प्रस्तावना
- 4.3 कथामुख
- 4.4 सिंहकारकब्राह्मण प्रकरण
- 4.5 कथान्त
- 4.6 सारांश
- 4.7 कठिन शब्दावली
- 4.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 4.9 अभ्यास प्रश्न
- 4.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 4.11 सहायक अध्ययनसामग्री

### 4.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप-

- सिंहकारकब्राह्मण कथा को विस्तार से अपने शब्दों में बताने में सक्षम होंगे।
- इस कथा से प्राप्त शिक्षा को जीवन की व्यावहारिक आवश्यकताओं से जोड़कर देखने में समर्थ होंगे।
- अपना संस्कृत भाषा ज्ञान पूर्व अवस्था से अधिक समृद्ध पाएँगे।
- बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से व्यावहारिक परिस्थितियों का सम्यक् चिन्तन कर निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि पाएँगे।



टिप्पणी

## 4.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! आपने इस पाठ से पूर्व के पाठों में पञ्चतन्त्र के 'अपरीक्षितकारकम्' नामक तन्त्र से कथाएँ पढ़ी हैं। उनमें जिस प्रकार सम्यक् चिन्तन कर बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से निर्णय लेने की शिक्षा दी गई है, उसी प्रकार प्रस्तुत कथा में भी दी गई है। इसमें ऐसे चार मित्रों के जीवन की घटना है जिनमें से तीन शास्त्रविद्या जानते थे लेकिन व्यावहारिक बुद्धि नहीं थी, चौथे के पास शास्त्रविद्या नहीं थी लेकिन व्यावहारिक बुद्धि अच्छी थी। आइये जानते हैं, ऐसे मित्र किस प्रकार विपदा में पड़ते हैं और उनमें से विद्या व बुद्धि में से किसकी उपयोगिता क्या है, इसके बारे में ज्ञान प्राप्त होता है।

## 4.3 कथामुख

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणपुत्राः परस्परं मित्रभावमुपगता वसन्ति स्म। तेषां त्रयः शास्त्रपारङ्गताः परन्तु बुद्धिरहिताः। एकस्तु बुद्धिमान् केवलं शास्त्रपराङ्मुखः। अथ तैः कदाचिन्मित्रैर्मन्त्रितम्- 'को गुणो विद्याया, येन देशान्तरं गत्वा, भूपतीन् परितोष्यार्थोपार्जना न क्रियते। तत्पूर्वदेशं गच्छावः।

तथानुष्ठिते किञ्चिन्मार्गं गत्वा तेषां ज्येष्ठतरः प्राह- अहो! अस्माकमेकश्चतुर्थो मूढः, केवलं बुद्धिमान्। न च राजप्रतिग्रहो बुद्ध्या लभ्यते, विद्यां विना। तन्नास्मै स्वोपार्जितं दास्यामि। तद्रच्छतु गृहम्।

ततो द्वितीयेनाभिहितम् - 'भोः सुबुद्धे! गच्छ त्वं स्वगृहे, यतस्ते विद्या नास्ति।

ततस्तृतीयेनाभिहितम्- 'अहो, न युज्यते एवं कर्तुम्। यतो वयं बाल्यात्प्रभृत्येकत्र क्रीडिताः। तदागच्छतु महानुभावोऽस्मदुपार्जितवित्तस्य समभागी भविष्यतीति। उक्तं च-

किं तया क्रियते लक्ष्म्या या वधूरिव केवला।

या न वेश्येव सामान्या पथिकैरुपभुज्यते॥5.36॥

**हिन्दी अनुवाद-** किसी नगर में चार ब्राह्मण पुत्र मित्रभाव से रहते थे। उनमें से तीन शास्त्रों के अच्छे जानकार थे लेकिन बुद्धि (व्यावहारिक ज्ञान) से रहित थे। एक व्यावहारिक ज्ञान से तो युक्त था लेकिन शास्त्र के ज्ञान से रहित था।



अब उन मित्रों द्वारा विचार किया गया- 'ऐसी विद्या का गुण ही क्या जिससे दूसरे प्रदेश में जाकर राजाओं को सन्तुष्ट करके धन उपार्जन नहीं किया जाए? अतः हम पूर्व दिशा में चलते हैं।

वैसा करने पर थोड़े से मार्ग पर जाकर उनमें से बड़े वाला बोला – हमारा यह चौथा मूर्ख है, केवल बुद्धिमान है। विद्या के बिना, केवल बुद्धि से राजाओं से धन नहीं प्राप्त किया जाता है। इसलिए हमारे द्वारा कमाया हुआ धन इसको नहीं देंगे, वह घर चला जाये।

तब दूसरे द्वारा कहा गया- 'अरे सुबुद्धि! तुम अपने घर जाओ क्योंकि तुम्हारे पास विद्या नहीं है।'

तब तीसरे द्वारा कहा गया- 'अरे ऐसा करना ठीक नहीं है क्योंकि हम लोग बाल अवस्था से ही एक साथ खेले हुए हैं। इसलिए आइये, (यह) महानुभाव हमारे द्वारा कमाये हुए धन में से अंश ग्रहण कर लेगा।

कहा भी है- उस लक्ष्मी का क्या उपयोग जिसका वधू की तरह एक के ही द्वारा भोग किया जाये (और) जो वेश्या की तरह सबके मार्ग चलते सामान्य व्यक्ति के उपभोग में नहीं आवे।

तथा च-

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥5.37॥

तदागच्छत्वेषोऽपीति।

**हिन्दी अनुवाद-** और- 'यह मेरा है', 'यह पराया है' ऐसी गणना तो छोटे लोगों के द्वारा की जाती है। उदारचरित्र वालों के लिए तो सम्पूर्ण पृथ्वी (जगत) ही कुटुम्ब की तरह होती है।' इसलिए यह भी आ जाये।

#### 4.4 सिंहकारकब्राह्मण प्रकरण

तथानुष्ठिते तैर्माग्राश्रितैरटव्यां मृतसिंहस्यास्थीनि दृष्टानि। ततश्चैकेनाभिहितम् अहो! अद्य विद्याप्रत्ययः क्रियते। किञ्चिदेतत्सत्त्वं मृतं तिष्ठति। तद्विद्याप्रभावेण जीवनसहितं कुर्मः। अहमस्थिसञ्चयं करोमि।

ततश्च तेनौत्सुक्यादस्थिसञ्चयः कृतः। द्वितीयेन चर्ममांसरुधिरं संयोजितम्। तृतीयोऽपि यावज्जीवनं सञ्चारयति, तावत्सुबुद्धिना निषिद्धः-भोः तिष्ठतु भवान्। एष सिंहो निष्पाद्यते। यद्येनं सजीवं करिष्यसि ततः सर्वानपि व्यापादयिष्यति।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री

51





टिप्पणी

इति तेनाभिहितः स आहधिङ्मूर्ख! नाहं विद्याया विफलतां करोमि।

ततस्तेनाभिहितं तर्हि प्रतीक्षस्व क्षणं यावदहं वृक्षमारोहामि।

तथानुष्ठिते, यावत्सजीवः कृतस्तावत्ते त्रयोऽपि सिंहेनोत्थाय व्यापादिताः । स च पुनर्वृक्षादवतीर्य गृहं गतः ।

**हिन्दी अनुवाद-** ऐसा निश्चय करके मार्ग चलते हुए उनके द्वारा कुछ अस्थियाँ देखी गई।

और तब एक ने कहा- अहो! आज विद्या के प्रभाव को प्रत्यक्ष करते हैं। ये अस्थियाँ किसी मरे हुए प्राणी की हैं। विद्या के प्रभाव से जीवित करते हैं। मैं अस्थियों को इकट्ठा करता हूँ। तब उसने उत्सुकता से अस्थियों को एकत्रित (जोड़) कर दिया। दूसरे ने (उन हड्डियों पर) माँस-रुधिर और चर्म उत्पन्न कर दिया। तीसरा भी जब उनमें जीवन का सञ्चार करने लगा, तो सुबुद्धि द्वारा रोका गया- अरे, आप ठहरो! यह सिंह को जीवित किया जा रहा है। यदि इसको जीवित करोगे तो (हम) सभी को खा जायेगा। ऐसा उसके द्वारा कहने पर, उसने बोला- 'धिक्कार है मूर्ख! मैं अपनी विद्या को विफल नहीं कर सकता हूँ।' तब उसने कहा- 'तो क्षणभर प्रतीक्षा कीजिए, जब तक मैं वृक्ष पर चढ़ता हूँ।' वैसा करके जब सिंह को सजीव किया गया तब वे तीनों भी उठे हुए सिंह द्वारा मार दिये गये और वह पुनः वृक्ष से उतरकर घर चला गया।

#### 4.5 कथान्त

अतोऽहं ब्रवीमि वरं बुद्धिर्न सा विद्या इति ।

अतः परमुक्तं स सुवर्णसिद्धिना-

अपि शास्त्रेषु कुशला लोकाचारविवर्जिताः।

सर्वे ते हास्यतां यान्ति यथा ते मूर्खपण्डिताः॥5.38॥

चक्रधर आह-कथमेतत्?

सोऽब्रवीत्

**हिन्दी अनुवाद-** इसलिए मैं कहता हूँ- 'वह विद्या नहीं, बुद्धि बड़ी है।' और सुवर्णसिद्धि द्वारा आगे कहा गया - 'शास्त्रों में कुशल होते हुए भी लोक-व्यवहार (के ज्ञान) से शून्य हों, तो वे संसार में उपहास (हंसी) को प्राप्त होते हैं, जैसे- वे मूर्ख पण्डित।॥39॥

चक्रधर ने कहा- यह कथा (कहानी) कैसे है? सुवर्णसिद्धि कहने लगा-



**बोध-प्रश्न**

1. सिंहकारकब्राह्मण कथा के अनुसार चार मित्रों में से शास्त्रविद्या से रहित मित्र कितने थे-  
 (क) तीन (ख) दो  
 (ग) चार (घ) एक
2. सिंहकारकब्राह्मण कथा के अनुसार मित्र किस प्रकार धनोपार्जन करने निकले-  
 (क) व्यवसाय से (ख) राजा को विद्या से सन्तुष्ट करके  
 (ग) कृषि से (घ) गौपालन से
3. अयं निजः परो वेति गणना...।  
 (क) लघुचेतसाम् (ख) विस्तृतचेतसाम्  
 (ग) उन्नतचेतसाम् (घ) उदारचेतसाम्
4. ...तु वसुधैव कुटुम्बकम्।  
 (क) लघुचेतसाम् (ख) उदारचरितानाम्  
 (ग) उन्नतचेतसाम् (घ) उदारचेतसाम्
5. सिंहकारकब्राह्मण कथा के अनुसार तीन मित्रों ने किसे जीवित किया-  
 (क) भालू (ख) सिंह  
 (ग) व्याघ्र (घ) सर्प

**4.6 सारांश**

प्रिय विद्यार्थियो! आपने इस पाठ में सिंहकारक ब्राह्मण कथा पढ़ी। इस कथा में जाना कि किस प्रकार विद्यायुक्त होते हुए भी तीन मित्रों ने व्यावहारिक बुद्धि वाले चौथे मित्र के परामर्श की अवहेलना की। उन्होंने परस्पर मिलकर शास्त्रविद्या का उपयोग कर मरे हुए शेर की अस्थियों को एकत्र कर सजीव कर दिया। वह शेर उनके लिए मृत्यु का कारण बन गया। इस प्रकार विद्या होते हुए भी व्यावहारिक बुद्धि के अभाव में आत्मविनाश को प्राप्त हुए। चौथा उस परिस्थिति में भी अपनी बुद्धि के बल से आत्मरक्षा कर पाया।



टिप्पणी

इससे हमें यह शिक्षा मिलती है कि विद्या का उपयोग कब, कहाँ, कैसे इत्यादि पक्षों पर उचित विचार करके ही करना चाहिए अन्यथा वह उपयोग आत्मविनाश का कारण बन सकता है।

#### 4.7 कठिन शब्दावली

- बुद्धिरहिता: – व्यवहारज्ञानशून्य
- मूढ: – मूर्ख
- शास्त्रपराङ्मुख: – विद्यारहित
- राजप्रतिग्रह: – राजा आदि के द्वारा दिया गया धन
- वधूरिव – पत्नी की तरह
- पथिकै: – मार्ग जाने वालों के द्वारा
- निज: – अपना
- पर: – दूसरे का
- लघुचेतसाम् – संकुचित मन वालों का
- उदारचरितानाम् – विस्तृत मन वालों का
- निष्पाद्यते – सम्पन्न किया जाता है
- व्यापादयिष्यति – मारेगा
- प्रतीक्षस्व – प्रतीक्षा कीजिए
- वरम् – श्रेष्ठ
- लोकाचारविवर्जिता: – लौकिक व्यवहार की बुद्धि से रहित

#### 4.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (ख)
3. (क)



4. (ख)

5. (ख)

#### 4.9 अभ्यास प्रश्न

1. सिंहकारकब्राह्मण कथा को सारगर्भित रूप में लिखिए।
2. सिंहकारकब्राह्मण कथा से प्राप्त व्यावहारिक शिक्षा पर टिप्पणी लिखिए।

#### 4.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, गुरुप्रसादशास्त्री व सीतारामशास्त्री (टीकाकार), बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019 ।
- पञ्चतन्त्र, विष्णुशर्मा, ज्वाला प्रसाद मिश्र (टीकाकार), खेमराज श्री कृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बोम्बे, 1910 ।
- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, श्यामाचरणपाण्डेय (व्याख्याकार), मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975 ।

#### 4.11 सहायक अध्ययनसामग्री

- *Pancatantram* (ed. and trans.) by M.R. Kale, Motilal Banarsidas, Delhi, 1999.
- *Pancatantram* (trans.) by Penguin Classics, Penguin Books.





पाठ-5  
मूर्खब्राह्मणकथा

डॉ. ओम प्रकाश

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,  
डी.डी.सी.ई., सी.ओ.एल., एस.ओ.एल.,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संरचना

- 5.1 अधिगम के उद्देश्य
- 5.2 प्रस्तावना
- 5.3 कथामुख
- 5.4 मूर्खब्राह्मण प्रकरण
- 5.5 कथान्त
- 5.6 सारांश
- 5.7 कठिन शब्दावली
- 5.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 5.9 अभ्यास प्रश्न
- 5.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 5.11 सहायक अध्ययनसामग्री

5.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप—

- मूर्खब्राह्मणकथा को अपने शब्दों में बताने में सक्षम होंगे।
- यह जानेंगे कि जीवन में सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान का सामञ्जस्य होना चाहिए।
- यह भी जानेंगे कि शास्त्र के शब्दों का वास्तविक अर्थ जानना चाहिए, तभी उसे जीवन में उपयोग में ला सकते हैं।



टिप्पणी

## 5.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! आपने पूर्व के पाठों में पञ्चतन्त्र के 'अपरीक्षितकारकम्' नामक तन्त्र की कथाएँ पढ़ते आ रहे हैं। इस अध्याय में भी उसी तन्त्र की एक नई कथा 'मूर्खब्राह्मणकथा' पढ़ेंगे। जैसा कि आपने देखा 'अपरीक्षितकारकम्' नामक तन्त्र का सन्देश है- 'उचित चिन्तन-मनन करके ही कोई कार्य करना चाहिए, बिना सोचे-विचारे नहीं'। पूर्व की कथाओं में भिन्न-भिन्न परिस्थितियों के माध्यम से यह सन्देश स्पष्ट किया गया है, यह आपने जाना। प्रस्तुत कथा में एक भिन्न परिदृश्य है। यह मुख्यतः शास्त्र के अर्थ का उचित अर्थ जानकर व्यवहार करने से सम्बन्धित है। चारों ब्राह्मण मित्र सैद्धान्तिक विद्या ग्रहण करने के पश्चात् अपने घर के लिए निकलते हैं तो उस विद्या का अनुचित अर्थ लगाने के कारण मार्ग में ही भटककर किस प्रकार विपत्ति में पड़ जाते हैं, यह इस पाठ में दी गई कथा में जानेंगे।

## 5.3 कथामुख

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणाः परस्परं मित्रत्वमापन्ना वसन्ति स्म। बालभावे तेषां मतिरजायत भोः देशान्तरं गत्वा विद्याया उपार्जनं क्रियते।

अथ अन्यस्मिन् दिवसे ते ब्राह्मणाः परस्परं निश्चयं कृत्वा विद्योपार्जनार्थं कान्यकुब्जे गताः। तत्र च विद्यामठे गत्वा पठन्ति। एवं द्वादशाब्दानि यावदेकचित्तया पठित्वा, विद्याकुशलास्ते सर्वे सज्जाताः।

**हिन्दी अनुवाद-** किसी नगर में चार ब्राह्मण मैत्रीभाव से रहते थे। बालावस्था में उनको बुद्धि आई कि- 'अन्य प्रदेश में जाकर विद्या ग्रहण करनी चाहिए'।

अब किसी दिन परस्पर निश्चय करके वे सब विद्या प्राप्त करने के लिए कन्नौज देश (कानपुर के पास) गये। और वहाँ जाकर पाठशाला में पढ़ने लगे। इस प्रकार बारह वर्ष एकाग्र मन से पढ़कर से वे सब विद्या में निपुण हो गए।

ततस्तैश्चतुर्भिर्मिलित्वोक्तम्बयं सर्वविद्यापारङ्गताः। तदुपाध्यायमुत्कलापयित्वा स्वदेशं गच्छामः। तथैवानुष्ठीयतामित्युक्त्वा ब्राह्मणा उपाध्यायमुत्कलापयित्वा अनुज्ञां लब्ध्वा पुस्तकानि नीत्वा प्रचलिताः।



**हिन्दी अनुवाद-** तब उन चारों के द्वारा मिलकर कहा गया कि- हम लोग सभी विद्याओं में निष्णात हो गये हैं। अब उपाध्याय (शिक्षक) से पूछकर अपने प्रदेश चलते हैं। ऐसा ही किया जाये, ऐसा कहकर, उपाध्याय जी से आज्ञा लेकर, पुस्तकें लेकर अपने देश को चलना चाहिए। ऐसा विचार कर और गुरुजी से पूछकर और उनकी आज्ञा प्राप्तकर वे चारों ब्राह्मण अपनी-अपनी पुस्तकें लेकर अपने घर की ओर चल पड़े।

## 5.4 मूर्खब्राह्मण प्रकरण

यावत्किञ्चिन्मार्गं यान्ति, तावद् द्वौ पन्थानौ समायातौ। उपविष्टाः सर्वे।

तत्रैकः प्रोवाच केन मार्गेण गच्छामः?

एतस्मिन् समये तस्मिन् पत्तने कश्चित्त्वणिक्पुत्रो मृतः। तस्य दाहाय महाजनो गतोऽभूत्। ततश्चतुर्णां मध्यादेकेन पुस्तकमवलोकितम्-

‘महाजनो येन गतः स पन्थाः’- इति ।

तन्महाजनमार्गेण गच्छामः।’

अथ ते पण्डिता यावन्महाजनमेलापकेन सह यान्ति, तावद्रासभः कश्चित्तत्र श्मशाने दृष्टः।

अथ द्वितीयेन पुस्तकमुद्घाट्यावलोकितम्।

**हिन्दी अनुवाद-** जब मार्ग में कुछ दूरी जाते हैं तो दो मार्ग आने पर (जहाँ से रास्ता दो ओर जाता था) वे सब बैठ गए।

वहाँ एक ने कहा- किस मार्ग से चलें?

इसी समय उन चारों में से एक ने पुस्तक निकाल कर देखी। और कहा कि- इसमें लिखा है कि- ‘जिस मार्ग से महाजन लोग (जनता, जनसमूह या बड़े लोग) गये हों, वही मार्ग जाने योग्य है’। अतः हमें भी इसी मार्ग से जाना चाहिये।

इस प्रकार वे पण्डित उन महाजनों के समूह के साथ श्मशान में जा पहुँचे। वहाँ एक गधा दिखाई दिया। तब दूसरे ने पुस्तक खोलकर देखा।

उत्सवे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रुसङ्कटे।

राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति, स बान्धवः॥5.39॥





टिप्पणी

तदहो! अयमस्मदीयो बान्धवः। ततः कश्चित्तस्य ग्रीवायां लगति। कोऽपित्पादौ प्रक्षालयति। अथ यावत्ते पण्डिताः दिशामवलोकनं कुर्वन्ति तावत्कश्चिद् उष्ट्रो दृष्टः। तैश्चोक्तम् – ‘एतत्किम्?’ तावत्तृतीयेन पुस्तकमुद्घाट्योक्तम् – ‘धर्मस्य त्वरिता गतिः’। तन्नूनमेष धर्मस्तावत्।

चतुर्थेनोक्तम् – ‘इष्टं धर्मेण योजयेत्’।

अथ तैश्च रासभ उष्ट्रग्रीवायां बद्धः। तत्तु केनचित्तत्त्वामिनो रजकस्याग्रे कथितम्। यावद्रजकस्तेषां मूर्खपण्डितानां प्रहारकरणाय समायातस्तावत्ते प्रनष्टाः।

**हिन्दी अनवाद-** ‘उत्सव में, विपत्ति में, अकाल पड़ने पर और जिस समय शत्रुओं द्वारा आक्रमण के समय, राजद्वार में (कचहरी में, मामला मुकदमा में) एवं श्मशान में, जो उपस्थित रहे, (खड़ा रहे या काम आवे), वही बान्धव है। 140 ॥

अतः यह (गधा) हमारा बान्धव (भाई) है। तब कोई उसके गले लगने लगा। कोई उसके पैरों को धोने लगा।

उसी समय वे पण्डित सभी दिशाओं में देखते हैं तब कोई एक ऊँट दिखाई दिया। वे पूछने लगे कि यह क्या है?

तब तीसरे पण्डित ने पुस्तक खोलकर कहा- ‘धर्म की तेज गति होती है। अतः यह निश्चित ही धर्म है’। तब चौथे (पण्डित) ने कहा- ‘इष्ट (बन्धु-बान्धव, मित्र आदि) को धर्म के साथ मिला देना चाहिए’। अब उनके द्वारा गधा ऊँट के गले में बाँध दिया गया’।

वह (वृत्तान्त) किसी ने गधे के स्वामी धोबी के आगे कह दिया। ज्योंही वह धोबी उन मूर्ख पण्डितों को पीटने के लिए दौड़ा, त्योंही वे सब दौड़ गये।

ततो यावदग्रे किञ्चित्स्तोकं मार्गं यान्ति तावत्काचिन्नदी समासादिता। तस्य जलमध्ये पलाशपत्रमायान्तं दृष्ट्वा पण्डितेनैकेनोक्तम्- ‘आगमिष्यति यत्पत्नं तदस्मांस्तारयिष्यति।’ एतत्कथयित्वा तत्पत्रस्योपरि पतितो यावन्नद्या नीयते तावत्तं नीयमानमलोक्यान्नेन पण्डितेन केशान्तं गृहीत्वोक्तम्-

‘सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः।

अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसहः’ ॥5.40 ॥

इत्युक्त्वा तस्य शिरश्छेदो विहितः।

**हिन्दी अनुवाद-** वहाँ से थोड़े ही दूर आगे जाते हैं, एक नदी मार्ग में मिली। उस जल के मध्य में पलाश के पत्ते को आता देखकर एक पण्डित ने कहा – ‘जो पत्ता (या जहाज नाव, या) आयेगा



वह हमें पार करायेगा।' ऐसा कहकर उस पत्ते पर पैर रखने लगा और जब नदी द्वारा बहाया जाने लगा तब उसे बहते हुए देखकर दूसरे पण्डित ने उसके शिर के बाल पकड़कर कहा- 'सम्पूर्ण का नाश उत्पन्न होने लगे तो पण्डित आधा छोड़ दे और आधे से ही कार्य करे क्योंकि सम्पूर्ण का नाश नहीं सहा जा सकता है'। 41 ॥

ऐसा कहकर उसका शिर काट लिया।

अथ तैश्च पश्चात्तात्वा कश्चित्पाम आसादितः। तेऽपि ग्रामीणैर्निमन्त्रितः पृथग्गृहेषु नीताः। तत एकस्य सूत्रिका घृतमण्डसंयुता भोजने दत्ता। ततो विचिन्त्य पण्डितेनोक्तं 'यत्दीर्घसूत्री विनश्यति'। एवमुक्त्वा भोजनं परित्यज्य गतः। तथा द्वितीयस्य मण्डका दत्ताः। तेनाऽप्युक्तम्- 'अतिविस्तारविस्तीर्णं तद्भवेन्न चिरायुषम्।' स च भोजनं त्यक्त्वा गतः।

**हिन्दी अनुवाद-** अब वे सब एक गाँव में पहुँचे। वे भी गाँव के लोगों का निमन्त्रण पाकर पृथक्-पृथक् घरों में ले जाये गये। उनमें से एक को घी-चीनी से बनी हुई सूत्रिका (सेवई, या जलेबी) भोजन में दी गई। उसने विचार कर कहा कि- जो दीर्घसूत्री (जिसमें लम्बे-लम्बे सूत्र अर्थात् रेशे हों) वह अवश्य ही नष्ट हो जाता है (उसे खाने वाला) और ऐसा कह कर वह भोजन छोड़कर चला गया [दीर्घसूत्री- आलसी, लम्बे २ सूत्र-रेशे-वाला भोजन]।

दूसरे पण्डितजी को मण्डक (मांड़ा, रोटी, फुलका, या टिकडिया) परोसे गये। उसने कहा 'जो ज्यादा लम्बा चौड़ा होता है, वह (वह तथा उसे खाने वाला) दीर्घायु नहीं होता है और वह भी भोजन त्यागकर चला आया।

अथ तृतीयस्य वटिकाभोजनं दत्तम्। तत्रापि तेन पण्डितेनोक्तम् 'छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति'। एवं ते त्रयोऽपि पण्डिताः क्षुत्क्षामकण्ठा, लोके हास्यमानास्ततः स्थानात्स्वदेशं गताः।

**हिन्दी अनुवाद-** तीसरे को वाटिका (बाटी) भोजन में दी गई। उसने कहा- 'जहाँ छिद्र (छेद, या त्रुटि, दोष) हो वहाँ बहुत अनर्थ हुआ करते हैं। (इस बाटी में छेद हैं, इसलिए यह खाने के योग्य नहीं है।) इस प्रकार तीनों पण्डित भूख-प्यास के मारे व्याकुल होकर इधर-उधर भटकते हुए, हँसी के पात्र बनते हुए, उस स्थान से अपने क्षेत्र को चले गए।

## 5.5 कथान्त

अथ सुवर्णसिद्धिराह- 'यत्त्वं लोकव्यवहारमजानन्मया वार्यमाणोऽपि न स्थितः तत ईदृशीमवस्थातुमुपगतः।' अतोऽहं ब्रवीमि - 'अपि शास्त्रेषु कुशलाः' इति।



टिप्पणी

**हिन्दी अनुवाद-** सुवर्णसिद्धि ने कहा कि 'तुम तो लोक व्यवहार को न जानते हुए मेरे द्वारा रोके जाते हुए भी नहीं रूके इसलिए इस दशा को प्राप्त हुए। इसीलिए कहता हूँ कि – 'केवल शास्त्र पढ़ लेने पर भी, व्यवहार जाने बिना, लोक जगत् में उपहास को ही प्राप्त होते हैं'।।

तच्छ्रुत्वा चक्रधर आह- 'अहो अकारणमेतत्' –

सुबुद्धयो विनश्यन्ति दुष्टदैवेन नाशिताः ।

स्वल्पधीरपि तस्मिंस्तु कुले नन्दति सन्ततम् ॥5.42॥

उक्तं च

अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति ।

जीवत्यनाथोऽपि वने विसर्जितः कृतप्रयत्नोऽपि गृहे न जीवति ॥5.43॥

तथा च

शतबुद्धिः शिरस्थोऽयं लम्बते च सहस्रधीः ।

एकबुद्धिरहं भद्रे! क्रीडामि विमले जले ॥5.43॥

सुवर्णसिद्धिराह कथमेतत्?

स आह-

**हिन्दी अनुवाद-** यह सुनकर चक्रधर ने कहा- 'अहो! यह सब तो बिना कारण के होता है'- इस संसार में अच्छी बुद्धि वाले भी, भाग्य की प्रतिकूलता से नष्ट हो जाते हैं, परन्तु अल्प बुद्धि वाले भी भाग्य की अनुकूलता से ही निरन्तर आनन्द प्राप्त करते हैं।।42॥

कहा भी है-

अरक्षित प्राणी भी भाग्य से रक्षा पाकर जीता है और सुरक्षित जीव एवं वस्तु भी भाग्य की प्रतिकूलता से नष्ट हो जाती है। देखिए, अनाथ एवं जंगल में छोड़ा हुआ भी प्राणी भाग्य की अनुकूलता से सुरक्षित एवं जीवित रह सकता है एवं कोई प्राणी प्रयत्न करने पर भी घर में जीवित नहीं जीता है।'

**अनुवाद-** और उसी प्रकार- हे प्रिये! यह शतबुद्धि मछली तो मछुआरे के शिर पर रखा हुआ है और यह सहस्रबुद्धि मछली मछुआरे के पीछे लटक रहा है। पर देखो, मैं एकबुद्धि इस स्वच्छ जल में आनन्द कर रहा हूँ।

सुवर्णसिद्धि ने पूछा कि -यह कथा (कहानी) कैसे है?

चक्रधर बोला-



### बोध-प्रश्न

1. 'मूर्खब्राह्मणकथा' के अनुसार चारों ब्राह्मण पढ़ने के लिए किस नगर में गये-  
 (क) उज्जैन (ख) कन्नौज  
 (ग) वाराणसी (घ) नालन्दा
2. 'मूर्खब्राह्मणकथा' के ब्राह्मणों ने पुस्तक में लिखे 'महाजन' शब्द का क्या अर्थ लगाया-  
 (क) वणिक् (ख) महापुरुष  
 (ग) हरिजन (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं
3. 'मूर्खब्राह्मणकथा' के ब्राह्मणों ने पुस्तक में लिखे 'धर्मस्य त्वरिता गतिः' के आधार पर किसका चयन किया-  
 (क) गधे का (ख) शृगाल का  
 (ग) ऊँट का (घ) गाय का
4. 'मूर्खब्राह्मणकथा' के ब्राह्मणों में से एक ने 'दीर्घसूत्री' शब्द का क्या अर्थ लगाया-  
 (क) लम्बे रेशे वाला (ख) लम्बे समय तक कार्य को टालने वाला  
 (ग) लम्बे बालों वाला (घ) सर्प
5. 'मूर्खब्राह्मणकथा' के ब्राह्मणों ने ऊँट के गले में बाँधा-  
 (क) बकरा (ख) गधा  
 (ग) बैल (घ) घण्टी

### 5.6 सारांश

प्रिय विद्यार्थियो! आपने इस पाठ में दी गई 'मूर्खब्राह्मणकथा' में जाना कि किस प्रकार चार ब्राह्मण शास्त्रों का अध्ययन करके भी उसका व्यवहार में उपयोग में असमर्थ रहते हैं। चारों मित्र जब शास्त्र पढ़कर शिक्षक से अनुमति लेकर घर के लिए प्रस्थान करते हैं तो एक स्थान पर मार्ग के चयन में शास्त्र के वाक्य का अनुचित अर्थ निकालकर निर्णय लेते हैं। उन्होंने 'महाजनो येन गतः स पन्थाः' में से महाजना का अर्थ उचित अर्थ महापुरुष के स्थान पर वणिक् (बनिया) ले लिया।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



टिप्पणी

इससे वे उनके पीछे-पीछे श्मशान में चले गये। वहाँ पर भी शास्त्र की शिक्षा '...राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः' राजद्वार में और श्मशान में जो साथ रहे, वह अपना बन्धु (भाई) है, का अनुचित अर्थ लगाकर वहाँ स्थित गधे को ही बन्धु मान लिया। इसी प्रकार 'धर्मस्य त्वरिता गतिः' धर्म की गति तेज होती है, का अनुचित अर्थ लगाकर उष्ट्र (ऊँट) को ही धर्म मान लिया। इस प्रकार आगे वाक्यों व शब्दों का अनुचित अर्थ लगाने से विपत्ति में डालने वाले व हास्यास्पद निर्णय लेते रहे।

उक्त कथा भी अच्छे से चिन्तन मनन करके कार्य करने की शिक्षा देती है। विशेष रूप से इस कथा में शास्त्र के वाक्यों व शब्दों का उचित अर्थनिर्धारण करके व्यवहार करने की शिक्षा है। ऐसा न करने से वह केवल शाब्दिक ज्ञान व अनुचित अर्थ लगाकर मूर्खता का परिचायक व हास्यास्पद हो जाता है।

## 5.7 कठिन शब्दावली

- आपन्ना: – प्राप्त
- कान्यकुब्जे – एक विशेष क्षेत्र (कन्नौज)
- विद्यामठे – पाठशाला में
- एकचित्ततया – तन्मयता से
- उत्कलापयित्वा – पूछकर
- अनुज्ञाम् – आज्ञा को
- लब्ध्वा – प्राप्त करके
- गतः – व्यवहार करता है
- महाजनमेलापकेन – बनियों के जन समूह द्वारा
- रासभः – गधा
- उद्घाट्य – खोलकर
- दुर्भिक्षे – अकाल में
- अस्मदीयः – हमारा
- अवलोकनम् – देखकर



- दृष्टः – दिखा
- त्वरिता – तेज
- ग्रीवायाम् – गर्दन में
- योजयेत् – जोड़ दें
- प्रनष्टाः – चले गये (पलायन कर गये)
- स्तोकम् – थोड़ा
- समासादिता – प्राप्त हुई
- पल्लं – वाहन, नौका आदि
- केशान्तम् – बालों का अग्र भाग
- आसादित – पहुँचे
- सूत्रिका – जलेबी
- घृतखण्डसंयुक्ता – घी व चीनी से बनी हुई
- दीर्घसूत्री – लम्बे रेशों वाला (कार्य को लम्बे समय तक लटकाने वाला)
- मण्डका – रोटि
- अतिविस्तारविस्तीर्णम् – बहुत बढ़ी हुई वस्तु
- वाटिका – बाटी
- छिद्रेषु – छेदों में, व्यसनों में
- क्षुतक्षामकण्ठाः – भूख से सूखे कण्ठ युक्त अर्थात् भूखे
- वार्यमाणः – रोके जाते हुए
- दैव – भाग्य
- नन्दति – प्रसन्न रहता है
- दैव – भाग्य
- विमल – स्वच्छ



टिप्पणी

### 5.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (क)
3. (ग)
4. (क)
5. (ख)

### 5.9 अभ्यास प्रश्न

1. मूर्खब्राह्मणकथा के आधार पर जीवन में व्यावहारिक बुद्धि के महत्त्व पर लेख लिखिए।
2. मूर्खब्राह्मणकथा को संक्षेप में अपने शब्दों में लिखिए।

### 5.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, गुरुप्रसादशास्त्री व सीतारामशास्त्री (टीकाकार), बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019।
- पञ्चतन्त्र, विष्णुशर्मा, ज्वाला प्रसाद मिश्र (टीकाकार), खेमराज श्री कृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बोम्बे, 1910।
- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, श्यामाचरणपाण्डेय (व्याख्याकार), मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975।

### 5.11 सहायक अध्ययनसामग्री

- *Pancatantram* (ed. and trans.) by M.R. Kale, Motilal Banarsidas, Delhi, 1999.
- *Pancatantram* (trans.) by Penguin Classics, Penguin Books.



पाठ-6  
मत्स्यमण्डूककथा

डॉ. ओम प्रकाश

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,  
डी.डी.सी.ई., सी.ओ.एल., एस.ओ.एल.,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संरचना

- 6.1 अधिगम के उद्देश्य
- 6.2 प्रस्तावना
- 6.3 कथामुख
- 6.4 मत्स्यमण्डूक प्रकरण
- 6.5 कथान्त
- 6.6 सारांश
- 6.7 कठिन शब्दावली
- 6.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 6.9 अभ्यास प्रश्न
- 6.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 6.11 सहायक अध्ययनसामग्री

6.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप-

- पञ्चतन्त्र की मत्स्यमण्डूककथा को अपने शब्दों में बताने में सक्षम होंगे।
- व्यावहारिक जीवन में निर्णय की समझ को विकसित पाएँगे।
- सिद्धान्त व व्यवहार के सामञ्जस्य पर विचार करने की क्षमता में वृद्धि पाएँगे।
- संस्कृत भाषा के ज्ञान में उन्नति प्राप्त करेंगे।
- संस्कृत कथा-साहित्य की रोचक कथा शैली से परिचित होंगे।





टिप्पणी

## 6.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! आपने पञ्चतन्त्र के 'अपरीक्षितकारकम्' नामक तन्त्र की कुछ कथाएँ पूर्व के अध्यायों में पढ़ी हैं। प्रस्तुत पाठ में मत्स्यमण्डूककथा को पढ़ेंगे। इस कथा में भी सम्यक् चिन्तन करके निर्णय लेने का सन्देश है इसलिए यह अपरीक्षितकारकम् का भाग है। यह कथा यदि वही सन्देश देती है जो पूर्व की कथाओं में है तो इसे क्यों सम्मिलित किया गया है? इस पर चिन्तन करने से सामने आता है कि इस कथा में उक्त सामान्य शिक्षा के साथ विशेष शिक्षा है। वह शिक्षा क्या है, उसको जानने के लिए आइए इस कथा को विस्तार से पढ़ते हैं।

## 6.3 कथामुख

कस्मिंश्चिज्जलाशये शतबुद्धिः सहस्रबुद्धिश्च द्वौ मत्स्यौ निवसतः स्म। अथ तयोरेकबुद्धिर्नाम मण्डूको मित्रतां गतः। एवं ते त्रयोऽपि जलतीरे कञ्चित्कालं वेलायां च सुभाषितगोष्ठीसुखमनुभूय, भूयोऽपि सलिलं प्रविशन्ति।

अथ कदाचित्तेषां गोष्ठीगतानां जालहस्ता धीवराः प्रभूतैर्मत्स्यैर्व्यापादितैर्मस्तके विधृतैरस्तमनवेलायां तस्मिञ्जलाऽऽशये समायाताः।

ततः सलिलाऽऽशयं दृष्ट्वा मिथः प्रोचुः- 'बहुमत्स्योऽयं हृदो दृश्यते, स्वल्पसलिलश्च। तत्प्रभातेऽत्रागमिष्यामः। एवमुक्त्वा स्वगृहं गताः।

**हिन्दी अनुवाद-** किसी जलाशय में शतबुद्धि और सहस्रबुद्धि नाम की दो मछलियाँ रहती थीं। उनका एकबुद्धि नाम का मेंढक मित्र था। वे तीनों जल के किनारे बीड़ में घूम कर, अच्छी चर्चा वाली गोष्ठी के सुख का अनुभव कर फिर जल में चले जाते थे।

अब किसी दिन वे गोष्ठी कर रहे थे, उस समय बहुत से मछुआरे हाथों में जाल लिए हुए और माथे पर मारी हुई बहुत सी मछलियों को रखे हुए थे- उस जलाशय में आए।

तब वे उस जलाशय को देखकर परस्पर कहने लगे- अहो! यह तालाब बहुत सी मछलियों से युक्त दिखाई देता है और इसमें पानी भी थोड़ा है। अतः प्रातःकाल में सब यहाँ आयेंगे। ऐसा कहकर वे मछुआरे अपने घर चले गये।



## 6.4 मत्स्यमण्डक प्रकरण

मत्स्याश्च विषण्णवदना मिथो मन्त्रं चक्रुः। ततो मण्डूक आह- 'भोः शतबुद्धे! श्रुतं धीवरोक्तं भवता? तत्किमत्र युज्यते कर्तुम्? पलायनमवष्टम्भो वा? यत्कर्तुं युक्तं भवति तदादिश्यतामद्य। तच्छ्रुत्वा सहस्रबुद्धिः प्रहस्य आह- भोः मित्र! मा भैषीः। तयोः वचनश्रवणमात्रादेव भयं न कार्यम्। न भेतव्यम्। उक्तं च-

सर्पाणां च खलानां च सर्वेषां दुष्टचेतसाम् ।

अभिप्राया न सिध्यन्ति तेनेदं वर्तते जगत् ॥5.45॥

तावत्तेषामागमनमपि न सम्पत्स्यते। भविष्यतिवा, तर्हि त्वां बुद्धिप्रभावेणात्मसहितं रक्षयिष्यामि। 'यतोऽनेकां सलिलचर्यामहं जानामि।'

तदाकर्ण्य शतबुद्धिराह- 'भो युक्तमुक्तं भवता। सहस्रबुद्धिरेव भवान्। अथवा साध्विदमुच्यते।

**हिन्दी अनुवाद-** और मछलियाँ दुःखी होकर परस्पर विचार करने लगे। तब मेंढक ने कहा- 'हे शतबुद्धे! आपने मछुआरों का कहना सुना ही है। अब क्या करना चाहिए? पलायन करना चाहिए या ठहरना चाहिए? आज जो करणीय है वह आदेश कीजिए।'

वह सुनकर सहस्रबुद्धि हँसकर बोला- हे मित्र! मत डरिए। किसी के केवल वचन सुनने से ही नहीं डर जाना चाहिए। कहा भी है-

सर्पों के, क्रूर हृदय वालों के और दुष्टों के सभी मनोरथ सिद्ध नहीं होते। इसी से यह संसार चल रहा है। इसलिए या तो कल उनका आना ही नहीं होगा और यदि होगा भी तो बुद्धि के प्रभाव से अपने सहित तुमको बचा लूँगा। क्योंकि मैं जल में गति के व्यवहार को जानता हूँ।

यह सुनकर शतबुद्धि बोला- आपके द्वारा ठीक कहा गया है। आप हजारबुद्धि ही ठहरे। किसी ने ठीक ही कहा है-

बुद्धेर्बुद्धिमतां लोके नास्त्यगम्यं हि किञ्चन ।

बुद्ध्या यतो हता नन्दाश्चाणक्येनासिपाणयः ॥5.46॥

**हिन्दी अनुवाद-** जगत् में बुद्धिमानों की बुद्धि से कुछ भी असम्भव नहीं है। क्योंकि बुद्धि से चाणक्य द्वारा अस्त-शस्त्रधारी नन्दवंशी (पटना के) राजा नष्ट कर दिया गया था।

तथा

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री

69



टिप्पणी

न यत्रास्ति गतिर्वायो रश्मीनां च विवस्वतः ।

तत्रापि प्रविशत्याशु बुद्धिर्बुद्धिमतां सदा ॥5.47॥

ततो वचनश्रवणमात्रादपि पितृपर्यायागतं जन्मस्थानं त्यक्तुं न शक्यते । उक्तं च-  
हिन्दी अनुवाद-

और भी

जहाँ वायु और सूर्य की किरणों की गति नहीं है, वहाँ भी बुद्धिमानों की बुद्धि पहुँच जाती है।  
इसलिए मछुआरों के केवल वचन सुनकर ही अपने पैतृक जन्मभूमि (इस जलाशय) को हम नहीं छोड़ सकते हैं। कहा भी है-

‘न तत्स्वर्गेऽपि सौख्यं स्याद्दिव्यस्पर्शेन शोभने ।

कुस्थानेऽपि भवेत्पुंसां जन्मनो यत्र सम्भवः ॥5.48॥

हिन्दी अनुवाद- दिव्य पदार्थों के स्पर्श से सुशोभित स्वर्ग में भी वह सुख नहीं है, जो मनुष्यों को अपनी जन्मभूमि के साधारण एवं रद्दी स्थानों में भी मिलता है। 48॥

‘तत्र कदाचिदपि गन्तव्यम्। अहं त्वां बुद्धिप्रभावेण रक्षयिष्यामि’। मण्डूक आह- ‘भद्रौ! मम तावदेकैव बुद्धिः पलायनपरा। तदहमन्यजलाशयमद्यैव सभार्यो यास्यामि।’ एवमुक्त्वा स मण्डूको रात्रावेवान्यजलाशयं गतः।

धीवरैरपि प्रभाते आगत्य, जघन्यमध्यमोत्तमजलचराः मत्स्यकूर्ममण्डूककर्कटादयो गृहीताः। तावपि शतबुद्धिसहस्रबुद्धी सभार्यो पलायमानौ चिरमात्मानं गतिविशेषविज्ञानैः कुटिलचारेण रक्षन्तौ जाले पतितौ, व्यापादितौ च।

हिन्दी अनुवाद- इसलिए यहाँ से नहीं जाना चाहिए। मैं तुम्हारी रक्षा अपनी बुद्धि से करूँगा। मण्डूक ने कहा- महाशयो! मेरी तो पलायन करने वाली (पलायन के निश्चय वाली) एकबुद्धि है। इसलिए मैं तो अपनी पत्नी सहित अन्य जलाशय को आज ही चला जाऊँगा। ऐसा बोलकर वह मेंढक रात्रि में ही दूसरे सरोवर में चला गया।

और प्रातःकाल में मछुआरों ने आकर छोटी बड़ी मछलियों को, और कछुवे, मेंढक, केकड़े आदि सभी जीवों को पकड़ लिया। मछलियाँ थी वो तो बाल बच्चों के साथ अपने गतिविशेष के विज्ञान व चाल-बाजियों से छिपते रहे और अपने को बचाते रहे, जाल में पड़ ही गए और मारे गए।



अथापराहसमये प्रहृष्टास्ते धीवराः स्वगृहं प्रति प्रस्थिताः। गुरुत्वाच्चैकेन शतबुद्धिः स्कन्धे कृतः। सहस्रबुद्धिः प्रलम्बमानो नीयते। ततश्च वापीकण्ठोपगतेन मण्डूकेन तौ तथा नीयमानौ दृष्ट्वा अभिहिता स्वपत्नी-प्रिये! 'पश्य पश्य'-

**हिन्दी अनुवाद-** और सायंकाल वे सब धीवर खुशी खुशी अपने घर जाने लगे। भारी होने के कारण एक धीवर ने शतबुद्धि को कन्धे पर रख लिया। और दूसरे ने सहस्रबुद्धि को लटका लिया और घसीटता हुआ उसे ले चला। तब बावड़ी के किनारे पर बैठे हुए उस मेंढक ने घसीट कर ले जाते हुए उन दोनों को देखकर, अपनी स्त्री से कहा, कि- हे प्रिये! देखो-देखो,

**शतबुद्धिः शिरःस्थोऽयं लम्बते च सहस्रधीः।**

**एकबुद्धिरहं भद्रे क्रीडामि विमले जले ॥5.49॥**

**हिन्दी अनुवाद-**

हे प्रिये! यह मछलियाँ थी वो तो शिर पर धरा हुई है और यह सहस्रबुद्धि लटक रही है।  
पर मैं एकबुद्धि इस स्वच्छ जल में खेल रहा हूँ।

## 6.5 कथान्त

अतश्च वरं बुद्धिर्न सा विद्या यद्भवतोक्तं तत्रेयं मे मतिर्यत् - न एकान्तेन बुद्धिरपि प्रमाणम्। सुवर्णसिद्धिः प्राह- यद्यप्येतदस्ति, तथापि मित्रवचनं न लङ्घनीयम्। परं किं क्रियते निवारितोऽपि मया न स्थितोऽसि, अतिलौल्यात्विद्याहङ्काराच्च । अथवा साध्विदमुच्यते-

इसलिए आपके द्वारा (सुवर्णसिद्धि द्वारा) जो कहा गया कि- 'विद्या से बुद्धि बड़ी है'। उस पर मेरा तो यही विचार है कि केवल बुद्धि से भी काम नहीं होता है।

सुवर्णसिद्धि बोला - यद्यपि ऐसा है, परन्तु मित्रों के वचनों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। पर क्या किया जाये? रोकने पर भी चञ्चलता व विद्या के अहङ्कार के कारण नहीं ठहरते हो। ठीक ही कहा जाता है-

**साधु मातुल गीतेन मया प्रोक्तोऽपि न स्थितः।**

**अपूर्वोऽयं मणिर्बद्धः सम्प्राप्तं गीतलक्षणम् ॥5.49॥**



टिप्पणी

चक्रधर आह- कथमेतत्?

सोऽब्रवीत्

**हिन्दी अनुवाद-** वाह मामाजी! वाह, मेरे द्वारा कहने पर भी गाने से नहीं रूके। गीत के पुरस्कार स्वरूप यह अनूठी मणि (ऊखल) गले में बंधी प्राप्त किये हो ॥४९॥

चक्रधर ने कहा- यह कथा कैसे है?

वह (सुवर्णसिद्धि) बोला-

(इससे आगे की कथा पाठ 7 में है।)

### बोध-प्रश्न

1. मत्स्यमण्डूककथा में शतबुद्धि नाम है-  

(क) मण्डूक का	(ख) मत्स्य का
(ग) धीवर का	(घ) मण्डूकराज का
2. मत्स्यमण्डूककथा में एकबुद्धि नाम है-  

(क) मण्डूक का	(ख) मत्स्य का
(ग) धीवर का	(घ) मण्डूकराज का
3. 'बुद्धेर्बुद्धिमतां लोके नास्त्यगम्यं हि किञ्चन' जगत् में बुद्धिमानों की बुद्धि द्वारा अप्राप्य कुछ भी नहीं है। यह कथन किसका है-  

(क) शतबुद्धि का	(ख) सहस्रबुद्धि का
(ग) एकबुद्धि का	(घ) धीवर का
4. बुद्धि से किसके द्वारा अस्त्र-शस्त्रधारी नन्दवंशी (पटना के) राजा नष्ट कर दिया गया था-  

(क) विक्रमादित्य	(ख) समुद्रगुप्त
(ग) चाणक्य	(घ) नरसिंहवर्मन्
5. 'शतबुद्धिः शिरःस्थोऽयं लम्बते च सहस्रधीः।' – यह किसने अपनी पत्नी से कहा-  

(क) एकबुद्धि	(ख) धीवर
(ग) पथिक	(घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं



## 6.6 सारांश

प्रिय विद्यार्थियो! आपने पूरी कथा पढ़ी है। इससे आपने जाना कि जब जीवन-मरण का प्रश्न हो तो किसी सूचना पर तुरन्त प्रक्रिया करते हुए उचित निर्णय लेना चाहिए। जब मछुआरों के सरोवर तट पर आकर वार्तालाप में यह प्रकट हो गया कि कल प्रातःकाल में यहाँ आयेंगे तब मछलियों ने इस पर चर्चा तो की किन्तु उनके नेता ने उचित निर्णय नहीं लिया। उसने उक्त सूचना पर गम्भीरता नहीं दिखाई। इसके साथ ही अपनी क्षमता का सही आकलन नहीं किया। शतबुद्धि व सहस्रबुद्धि में अतिआत्मविश्वास भी दिखाई देता है। मण्डूक ने उस आपदा की सूचना को गम्भीरता से लिया और परिवार सहित दूसरे स्थान पर चला गया। इससे उसने अपनी व परिवार की रक्षा कर ली। उसका ऐसा व्यवहार उसके नाम 'एकबुद्धि' को भी सार्थक करता है। इसी प्रकार 'शतबुद्धि' व 'सहस्रबुद्धि' नाम भी उनके निर्णय लेने में प्रदर्शित बुद्धि के अनुसार ही प्रतीत होते हैं।

## 6.7 कठिन शब्दावली

- वेलायां – तालाब के किनारे
- धीवराः – मछुआरे
- व्यापादितैः – मारे हुए
- विधृतैः – उपलक्षित
- वेला – बीड़
- विषण्णवदना – दुःखभाव से युक्त मुख
- अवष्टम्भः – स्थित रहना
- मा भैषीः – मत डरो
- खलानाम् – क्रूर हृदय वालों के
- अगम्य – जिसे पाया न जा सके
- असिपाणयः – हाथों में तलवार आदि युद्ध के साधन रखने वाले
- विवस्वतः – सूर्य की



टिप्पणी

- आशु – शीघ्र
- बुद्धिमताम् – बुद्धिमानों की
- भद्रौ! – दोनों महाशयो!
- पलायनपरा – पलायन करने का निश्चय करने वाली
- सभार्यः – पत्नी सहित
- मन्दूक – मेंढक
- जघन्याः – छोटे
- मध्यमाः – युवा
- उत्तमाः – वृद्ध (बूढ़े)
- कूर्म – कछुआ
- कर्कट – केकड़ा
- प्रहृष्टाः – प्रसन्न
- अपराह्णसमये – दोपहर के पश्चात्
- स्कन्धे – कन्धे पर
- प्रलम्बमानो – लटकाये हुए
- एकान्तेन – सदा
- प्रमाणम् – कार्य का साधन या जानने का साधन
- अतिलौल्यात् – अधिक चञ्चलता से

## 6.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (क)
3. (क)



4. (ग)

5. (क)

## 6.9 अभ्यास प्रश्न

1. मत्स्यमण्डूककथा का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
2. मत्स्यमण्डूककथा के पात्रों के नाम 'शतबुद्धि', 'सहस्रबुद्धि' व 'एकबुद्धि' व्यवहार में बुद्धि के किन आयामों को दर्शाते हैं, संक्षेप में बताइये।
3. मत्स्यमण्डूककथा से प्राप्त होने वाली शिक्षा पर प्रकाश डालिए।

## 6.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, गुरुप्रसादशास्त्री व सीतारामशास्त्री (टीकाकार), बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019 ।
- पञ्चतन्त्र, विष्णुशर्मा, ज्वाला प्रसाद मिश्र (टीकाकार), खेमराज श्री कृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बोम्बे, 1910 ।
- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, श्यामाचरणपाण्डेय (व्याख्याकार), मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975 ।

## 6.11 सहायक अध्ययनसामग्री

- *Pancatantram* (ed. and trans.) by M.R. Kale, Motilal Banarsidas, Delhi, 1999.
- *Pancatantram* (trans.) by Penguin Classics, Penguin Books.







पाठ – 7

रासभ-शृगाल-कथा

डॉ. ओम प्रकाश

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,  
डी.डी.सी.ई., सी.ओ.एल., एस.ओ.एल.,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संरचना

- 7.1 अधिगम के उद्देश्य
- 7.2 प्रस्तावना
- 7.3 कथामुख
- 7.4 रासभ-शृगाल प्रकरण
- 7.5 कथान्त
- 7.6 सारांश
- 7.7 कठिन शब्दावली
- 7.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 7.9 अभ्यास प्रश्न
- 7.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 7.11 सहायक अध्ययनसामग्री

7.1 अधिगम के उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप-

- पञ्चतन्त्र की रासभ-शृगालकथा से परिचित होंगे।
- संस्कृत भाषा के ज्ञान में वृद्धि पाएँगे।
- संस्कृत कथा साहित्य की कथा शैली की विशेषताओं का विश्लेषण कर पाएँगे।
- किसी कार्य को करने से पूर्व उपयुक्त-अनुपयुक्त परिस्थितियों पर विचार करने को प्रेरित होंगे। इससे व्यावहारिक जीवन में व्यवहारकशलता में वृद्धि होगी।
- हठधर्मिता की हानियों के प्रति सजग होंगे।
- व्यावहारिक व बुद्धिमतापूर्ण निर्णयों की ओर अग्रसर होंगे।



टिप्पणी

## 7.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! आपने पूर्व के पाठों में जो कथाएँ पढ़ी हैं, वे अपरीक्षितकारकम् नामक तन्त्र से हैं। उसी तन्त्र में रासभ-शृगालकथा भी है। इस कथा में एक गधे व सियार की परस्पर मैत्री व उनके खेतों में चरने के समय हुई विशेष घटना को दर्शाया गया है। एक रात्रि में जब दोनों साथ चर रहे थे तब गधे ने अपने सियार मित्र की बात न मानते हुए एक ऐसा कार्य किया कि उसे बहुत हानि हुई। उसने ऐसा क्या कार्य किया? उस कार्य से रोकने में सियार ने क्या प्रयास किया? आप ऐसे प्रश्नों के उत्तर जानने की इच्छा हो रही होगी। तो आइए, जानते हैं पूरी कथा जिसमें इन सभी प्रश्नों के उत्तर निहित हैं।

## 7.3 कथामुख

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने उद्धतो नाम गर्दभः प्रतिवसति स्म। स सदैव रजकगृहे भारोद्धहनं कृत्वा रात्रौ स्वेच्छया पर्यटति। ततः प्रत्यूषे बन्धनभयात्स्वयमेव रजकगृहमायाति । रजकोऽपि ततस्तं बन्धनेन नियुनक्ति।

**हिन्दी अनुवाद-** किसी नगर में उद्धत नाम का गधा रहता था। वह गधा सदा ही धोबी के घर में भार ढोकर रात्रि में अपनी इच्छा के अनुसार घूमा करता था। धोबी बाँध न दे, इस डर से वह सवेरा होते ही अपने आप ही धोबी के घर चला आता था। इसलिए धोबी भी उसे बाँधता नहीं था।

**अथ तस्य रात्रौ क्षेत्राणि पर्यटतः कदाचिच्छृगालेन सह मैत्री सञ्जाता स च पीवरत्वाद्वृत्तिभङ्गं कृत्वा कर्कटिकाक्षेत्रे शृगालसहितः प्रविशति । एवं तौ यदृच्छया चिर्भटिकाभक्षणं कृत्वा, प्रत्यहं प्रत्यूषे स्वस्थानं व्रजतः।**

**हिन्दी अनुवाद-** इस प्रकार उसके रात्रि में खेतों में घूमते घूमते एक सियार से मित्रता हो गई। और वह गधा मोटा होने से उस सियार के साथ खेतों की बाड़ तोड़कर ककड़ी के खेतों में प्रवेश कर जाता। इस प्रकार दोनों ककड़ी या काचर खाकर, प्रतिदिन सवेरे अपने स्थान (ठाण) पर पहुँच जाते थे।



## 7.4 रासभ-शृगाल प्रकरण

अथ कदाचित्तेन मदोद्धतेन रासभेन क्षेत्रमध्यस्थितेन शृगालोऽभिहितः- 'भोः भगिनीसूत! पश्य पश्य। अतीव निर्मला रजनी। तदहं गीतं करिष्यामि। तत्कथय कतमेन रागेण करोमि'। स आह- माम! किमनेन वृथानर्थप्रचालनेन? यतश्चौरकर्मप्रवृत्तावावाम्। निभृतैश्च चौरजारैरत्र स्थातव्यम्। उक्तं च-

कासयुक्तस्त्यजेच्चौर्यं, निद्रालुश्चेत्स पुंश्चलीम्।

जिह्वालौल्यं रुजाऽऽक्रान्तो, जीवितं योऽत्र वाञ्छति ॥5.50॥

**हिन्दी अनुवाद-** किसी दिन खेत के मध्य में मद से उन्मत्त उस गधे द्वारा सियार से बोला गया- 'अहो भानजे! देखिए-देखिए, बहुत स्वच्छ रात्रि है। इसलिए मैं गीत गाऊँगा। बताइए किस राग में गाऊँ?

वह (सियार) बोला - 'मामाजी! क्या इन व्यर्थ बातों से? क्योंकि हम लोग चोरी से इस खेत में आये हैं। चोर एवं जार द्वारा गुप्त रूप से अपना कार्य किया चाहिए।

कहा भी है-

जो खाँसी वाला हो उसे चोरी करना छोड़ देना चाहिए। जिसे अधिक नींद आती हो उसे पुंश्चली सेवन (परस्त्री गमन, व्यभिचार करना) छोड़ देना चाहिए। रोगग्रस्त व्यक्ति जीना चाहे तो जीभ के स्वाद के प्रति आकर्षण (चटपटे खाने) को छोड़ देना चाहिए।

अपरं त्वदीयं गीतं न मधुरस्वरं, शङ्खशब्दानुकारं दूरादपि श्रूयते। तदत्र क्षेत्रे रक्षापुरुषाः सुप्ताः सन्ति। ते उत्थाय वधं बन्धनं वा करिष्यन्ति। तद्भक्षय तावदमृतमयीश्चिर्भटीः। मा त्वमत्र गीतव्यापारपरो भव।

तच्छ्रुत्वा राभस आह- 'भो, वनाश्रयत्वात्त्वं गीतरसं न वेत्सि, तेनैतद्वीषि। उक्तं च

शरज्ज्योत्स्नाहते दूरं तमसि प्रियसन्निधौ।

धन्यानां विशति श्रोत्रे गीतझङ्कारजा सुधा' ॥5.51॥

शृगाल आह- 'माम, अस्त्येतत्। परं न वेत्सि त्वं गीतम्। केवलम्-उन्नदसि। तत्किं तेन स्वार्थभ्रंशकेन?'

रासभ आह- 'धिग्धिङ्-मूर्ख! किमहं न जानामि गीतम्? तद्यथा तस्य भेदान् शृणु-



टिप्पणी

**हिन्दी अनुवाद-** और तुम्हारा गीत भी मधुरस्वर वाला नहीं है, शङ्ख की ध्वनि की तरह दूर से ही सुनाई देता है। और इस खेत के रखवाले सो रहे हैं वे उठकर मारेंगे या बाँधेंगे। अतः चुपचाप अमृत रूपी ककड़ियाँ खाओ। यहाँ गाने का व्यापार रहने दीजिए।

यह सुनकर गधा बोला- अरे! तू वन में रहने के कारण गाने के रस (आनन्द) को नहीं जानता है। इसीलिये ऐसा बोल रहा है।

कहा भी है- शरत् ऋतु के चन्द्रमा की चाँदनी से जब अन्धकार दूर हो जाता है- (उस समय) अपनी प्रिया के साथ बैठे हुए होने पर भाग्यशाली के कान में गीत की झन्कार का अमृत पड़ता है॥51॥

सियार बोला- मामा जी! ऐसा ठीक है परन्तु तुम गीत नहीं जानते हो। केवल रेंकते हो। इसलिये स्वार्थ को बिगाड़ने से क्या?

गधा बोला- धिक्कार है मूर्ख! क्या मैं गीत नहीं जानता हूँ? देख, उसके भेद। सुनो-

सप्त स्वरास्तयो ग्रामा मूर्च्छनाश्चैकत्रिंशतिः।

तानास्त्वेकोनपञ्चाशत्तिस्रो मात्रा लयास्तयः ॥5.52॥

स्थानत्रयं यतीनां च षडस्यानि रसा नव ।

रागा षट्त्रिंशतिर्भावाश्चत्वारिंशत्ततः स्मृताः ॥5.53॥

पञ्चाशीत्यधिकं होतद्वीताङ्गानां शतं स्मृतम् ।

स्वयमेव पुरा प्रोक्तं भरतेन श्रुतेः परम् ॥5.54॥

**हिन्दी अनुवाद-** गीत में- ७ स्वर, ३ ग्राम, २१ मूर्च्छना, ४९ तान, ३ मात्रा, ३ लय, ३ स्थान, ५ या ३ यति, ६ मुख, ९ रस, ३६ राग रागिनियाँ, और ४० भाव- इस प्रकार १८५ गीत के अङ्क होते हैं- यह भगवान् भरत जी ने स्वयं कहा है।

नान्यद्वीतात्प्रियं लोके देवानामपि दृश्यते।

शुष्कस्नायुस्वराह्लादात्यक्षं जग्राह रावणः ॥5.55॥

तत्कथं भगिनीसुत मामनभिज्ञं वदन्निवारयति?’

शृगाल आह- ‘माम! यद्येवं यावद्वृत्तेर्द्वारस्थितः क्षेत्रपालमवलोकयामि, त्वं पुनः स्वेच्छया गीतं कुरु।



तथानुष्ठिते रासभरटनमाकर्ण्य क्षेत्रपः क्रोधात्तन्तान् घर्षयन् प्रधावितः। यावद्रासभो दृष्ट्वावल्लगुडप्रहारैस्तथा हतो, यथा प्रताडितो भूपृष्ठे पतितः। ततश्च सच्छिद्रमुलूखलं तस्य गले बद्ध्वा क्षेत्रपालः प्रसुप्तः। रासभोऽपि स्वजातिस्वभावाद्गतवेदनः क्षणेनाभ्युत्थितः। उक्तं च-

**अनुवाद-** देवताओं की भी गीत से बढ़कर प्रिय वस्तु इस संसार में दूसरी नहीं देखी जाती है। रावण ने वीणा के स्वर से शिव को प्रसन्न कर लिया था।

भानजे! ऐसे में मुझे (इस विषय में) अज्ञानी कहते हुए कैसे रोकता है?

सियार बोला- 'मामाजी! यदि ऐसा है तो मैं इस ककड़ी की बाड़ी के दरवाजे पर खड़ा होकर खेत के मालिक को देखता हूँ। और तुम अपनी इच्छा के अनुसार गीत गा लो'।

ऐसा होने पर गधे के रेंकने को सुनकर खेत का रक्षक क्रोध से दाँतों को घिसता हुआ (कटकटाता हुआ) तेजी से दौड़ा। और जैसे गधा दिखाई दिया उसको लकड़ी से वैसे मारा कि- वह जमीन पर गिर पड़ा। फिर छेद वाला ऊखल उस गधे के गले में बाँधकर, वह खेत का रक्षक सो गया। गधा भी अपने जातिस्वभाव के कारण थोड़ी ही देर में पीड़ा रहित होकर उठ खड़ा हुआ।

कहा भी है-

**सारमेयस्य चाश्वस्य रासभस्य विशेषतः।**

**मुहूर्तात्परतौ न स्यात्प्रहारजनिता व्यथा ॥5.56॥**

ततस् तमेवोलूखलमादाय वृत्तिं चूर्णयित्वा पलायितुमारब्धः। अत्रान्तरे शृगालोऽपि दूरादेव दृष्ट्वा सस्मितमाह-

**‘साधु मातुल! गीतेन, मया प्रोक्तोऽपि न स्थितः ।**

**अपूर्वोऽयं मणिर्बद्धः सम्प्राप्तं गीतलक्षणम्’ ॥5.57॥**

**तद्भवानपि मया वार्यमाणोऽपि न स्थितः।**

**हिन्दी अनुवाद-** कुत्ते की, घोड़े की, और विशेषरूप से गधे की, मारने से हुई पीड़ा कुछ ही समय के बाद चली जाती है।।

अतः जिससे बाँधा गया था उसी ऊखल को लेकर, बाड़ को तोड़ता हुआ, वह गधा भागा। सियार ने भी दूर से ही उसे भागते देखकर, हँसते हुए कहा-

वाह मामाजी! वाह, मेरे द्वारा कहने पर भी गाने से नहीं रूके। गीत के पुरस्कारस्वरूप यह अनूठी मणि (ऊखल) गले में बंधी हुई प्राप्त किये हो।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



टिप्पणी

सुवर्णसिद्धि बोला- हे मित्र! इसी मूर्ख गधे की तरह तुमने भी मेरे कहने को नहीं माना और कष्ट पा रहे हो।

## 7.5 कथान्त

तच्छ्रुत्वा चक्रधर आह- भो मित्र! सत्यमेतत्। अथवा साध्विदमुच्यते-

वह सुनकर चक्रधर बोला- हे मित्र! तुम ठीक कहते हो। यह अच्छा ही कहा जाता है-

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा मित्रोक्तं न करोति यः ।

स एव निधनं याति यथा मन्थरकौलिकः ॥5.58॥

सुवर्णसिद्धिराहकथमेतत्?

**हिन्दी अनुवाद-** जिसकी स्वयं की बुद्धि न हो और जो मित्रों के वचनों को भी न सुने, वह मन्थर नामक कौलिक (जुलाहा) की तरह ही कष्ट और मृत्यु को प्राप्त होता है। 58॥

सुवर्णसिद्धि ने पूछा कि- यह कहानी किस प्रकार है?

### बोध-प्रश्न

1. रासभ-शृगालकथा में रासभ (गधा) का नाम है-  

(क) गर्वित	(ख) उच्छ्रंखल
(ग) उद्धत	(घ) नाटू
2. रासभ-शृगालकथा का रासभ दिन में किसके घर रहता था-  

(क) कुम्हार	(ख) रजक
(ग) लोहार	(घ) सुनार
3. रासभ व शृगाल रात में खेत में क्या खाने गये थे-  

(क) ककड़ियाँ	(ख) मूँगफली
(ग) घास	(घ) धान



4. रासभ-शृगालकथा में मामाजी सम्बोधन किसके लिए है-

- |          |           |
|----------|-----------|
| (क) रासभ | (ख) शृगाल |
| (ग) रजक  | (घ) रक्षक |

5. 'गीत के पुरस्कार स्वरूप अनूठी मणि पाये हैं', इसमें मणि किसे बताया गया है-

- |             |           |
|-------------|-----------|
| (क) रत्नमणि | (ख) घण्टी |
| (ग) ऊखल     | (घ) रस्सी |

## 7.6 सारांश

प्रिय विद्यार्थियो! आपने इस पाठ में पञ्चतन्त्र के अपरीक्षितकारकम् नामक तन्त्र से रासभ-शृगालकथा पढ़ी। रासभ व शृगाल मित्र होकर साथ में खेतों में ककड़ियाँ खाते थे। किन्तु एक रात में रासभ द्वारा गीत गाने की हठधर्मिता के कारण शृगाल को अपने बचाव में बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय लेते हुए उसका साथ छोड़ना पड़ा। रासभ को खेत के रक्षक से मार खानी पड़ी और ऊखल गले में बाँध दिया गया।

यह कथा पशुपात्रों के माध्यम से मनुष्यों को सन्देश देती है कि हठधर्मिता नहीं करनी चाहिए। यदि स्वयं उचित निर्णय ले पाने में असमर्थ हो तो मित्रों की बात मान लेनी चाहिए। किसी कार्य को करने से पूर्व उपयुक्त-अनुपयुक्त परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए। जीवन में व्यवहारकुशलता के लिए यह आवश्यक है।

## 7.7 कठिन शब्दावली

- प्रतिवसति स्म – रहता था
- भारोद्वहनम् – भार ढोना
- पर्यटति – चारों ओर घूमता
- रजक – धोबी
- नियुनक्ति – बाँधता





टिप्पणी

- पीवरत्वाद् – स्थूल (मोटा) होने से
- वृत्तिभङ्गं कृत्वा – बाड़ तोड़कर
- शृगालसहितः – गीदड़ के साथ
- कर्कटिकाक्षेत्रे – ककड़ियों के खेत में
- यदृच्छया – इच्छा के अनुसार (मन भर कर)
- चिर्भटिकाभक्षणम् – छोटी ककड़ियाँ (काचरी)
- प्रत्यूषे – प्रातःकाल में
- व्रजतः – दोनों चले जाते
- मदोद्धतेन – मद से उन्मत्त
- भगिनीसूत – भानजा
- निर्मला रजनी – चन्द्रमा की किरणों से प्रकाशमान रात्रि
- कासयुक्त – जिसे खाँसी आती हो
- जिह्वालौल्यम् – जिह्वा की स्वाद के प्रति आकर्षण
- रुजाऽऽक्रान्तः – रोगयुक्त
- वाञ्छति – चाहता है
- अपरम् – और
- शङ्खशब्दानुकारम् – शङ्ख की ध्वनि जैसा
- रक्षापुरुषाः – रखवाली करने वाले
- वनाश्रयत्वात् – जंगल में रहने के कारण
- वेत्ति – जानते हो
- उन्नदसि – गर्व से बोल रहे हो
- गीतझङ्कारजा – गान से उठी हुई
- शुष्कस्नायु – सूखी तौत (वीणा)



- त्र्यक्षम् – तीन आँखें हैं जिसके वह (महादेव)
- रासभरटनम् – गधे की रेंक
- घर्षयन् – घिसते हुए (कट-कटाते हुए)
- लगुड – लकड़ी
- सारमेय – कुता
- ऊलूखल – ऊखल
- वृत्तिम् – बाड़ को
- चूर्णयित्वा – तोड़कर
- वार्यमाणः – रोके जाते हुए
- स्वयं प्रज्ञा – स्वयं की बुद्धि
- कौलिक – जुलाहा

## 7.8 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (ख)
3. (क)
4. (क)
5. (ग)

## 7.9 अभ्यास प्रश्न

1. रासभ-शृगाल कथा की व्यावहारिक जीवन में उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए।
2. रासभ-शृगाल कथा को संक्षेप में अपने शब्दों में प्रकट कीजिए।



टिप्पणी

### 7.10 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, गुरुप्रसादशास्त्री व सीतारामशास्त्री (टीकाकार), बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019 ।
- पञ्चतन्त्र, विष्णुशर्मा, ज्वाला प्रसाद मिश्र (टीकाकार), खेमराज श्री कृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बोम्बे, 1910 ।
- पञ्चतन्त्रम्, विष्णुशर्मा, श्यामाचरणपाण्डेय (व्याख्याकार), मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975 ।

### 7.11 सहायक अध्ययनसामग्री

- *Pancatantram* (ed. and trans.) by M.R. Kale, Motilal Banarsidas, Delhi, 1999.
- *Pancatantram* (trans.) by Penguin Classics, Penguin Books.

---

## इकाई – 3

---

पाठ 8 हितोपदेश : मित्रलाभः (वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा)





## हितोपदेश : मित्रलाभः (वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा)

**डॉ. प्रवीण ममगाई**

असिस्टेंट प्रोफेसर  
मुक्त शिक्षा विद्यालय,  
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

### संरचना

- 8.1 अधिगम के उद्देश्य
- 8.2 प्रस्तावना
- 8.3 वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा (बूढ़ा बाघ और पथिककथा)
- 8.4 सारांश
- 8.5 कठिन शब्दावली
- 8.6 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 8.7 अभ्यास प्रश्न
- 8.8 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 8.9 सहायक अध्ययन सामग्री

### 8.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप—

- हितोपदेश मित्रलाभ में वर्णित वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा के विषय में जानेंगे।
- जीवन में लोभ और लालच का क्या परिणाम होता है उस विषय में पढ़ेंगे।
- धर्म की आठ विधियों के विषय में जानेंगे।
- शास्त्रों में वर्णित महत्वपूर्ण सूक्तियों को जानेंगे।

### 8.2 प्रस्तावना

व्यक्ति अपने जीवन में अनेक कार्यों को करता है परन्तु उन कार्यों को सफल बनाने के लिए वह स्वयं में दया, धर्म, तप, ज्ञान, इन्द्रिय संयम एवं व्यवहार आदि गुणों का निर्माण करता है जिससे जीवन सफल होता है। वहीं मनुष्य के जीवन में अनेक दुर्गुणों के आने की संभावनाएँ भी बनी रहती

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री

89



टिप्पणी

हैं जैसे – काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, मात्सर्य आदि। मनुष्य को कैसे इन सभी दुर्गुणों को स्वयं से दूर करना चाहिए इसके लिए ही हितोपदेश मित्रलाभ आदि ग्रन्थों का लेखन किया जाता है। यहाँ हम इन्हीं सगुणों के प्रवेश एवं दुर्गुणों के निषेध के लिए कथा का उल्लेख करते हैं।

### 8.3 वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिककथा (बूढ़ा बाघ और पथिककथा)

‘अहमेकदा दक्षिणारण्ये चरन्नपश्यम्। एको वृद्धव्याघ्रः स्नातः कुशहस्ते सरस्तीरे ब्रूतेः - भो भो पान्थाः! इदं सुवर्णकङ्कणं गृह्यताम्’ ततो लोभाकृष्टेन केनचित्पान्थेनालोचितम् - भाग्येनैतत्संभवति। किंत्वस्मिन्नात्मसंदेहे प्रवृत्तिर्न विधेया। यतः,

मैंने एक बार दक्षिण वन में घूमते हुए देखा कि एक बृद्ध व्याघ्र ने स्नान करके कुश हाथ में लेकर तालाब के किनारे स्थित होकर बोला – “ए पथिको! इस स्वर्ण कंकन को ग्रहण करो” तब लोभाकर्षण से किसी पथिक ने मन में विचार किया ‘ऐसा (कार्य) भाग्य से संभव है। किन्तु इसमें अपने आप में संदेह होने से प्रवृत्ति नहीं करनी चाहिए’। क्योंकि कहा भी गया है कि—

“अनिष्टादिष्ट लाभेऽपि न गतिर्जायते शुभा।

यत्रास्ते विषसंसर्गोऽमृतं तदपि मृत्यवे ॥हि०मि०६॥

अमंगल (व्यक्ति अथवा कर्म) से इष्ट लाभ की प्राप्ति हो जाने पर भी, उसकी गति लाभ को प्राप्त नहीं होती है। अर्थात् दुष्ट प्राणी से यदि कोई कार्य संपन्न हो भी जाता है, तो भी वह अच्छा नहीं होता है। क्योंकि - जहाँ अमृत के साथ विष मिला दिया जाय अथवा विष का संसर्ग हो जाय, तो उस स्थिति में वह अमृत भी मृत्यु प्रदान करने वाला हो जाता है।

इस प्रकार से यहाँ अनिष्ट द्वारा सफल हुए कार्य को भी अमंगलकारी एवं असफलता के रूप में देखा गया है।

किन्तु सर्वत्रार्थार्जने प्रवृत्तिः संदेह एव। तथा चोक्तम्

लेकिन हमेशा सभी स्थानों पर धनार्जन करने में तो संदेह बना ही रहता है। जैसे कहा भी गया है

“न संशयमनारुह्य नरो भद्राणि पश्यति।

संशयं पुनरारुह्य यदि जीवति पश्यति ॥ हि०मि० ७॥

अर्थात् बिना संदेह में पड़े मनुष्य कल्याण (मंगल) की बात नहीं देखता है, परन्तु संदेह में रहकर वह पुनः जीता रहता है, तो फिर वह कल्याण की बात देखता है।



टिप्पणी

‘तन्निरूपयामि तावत्।’ प्रकाशं ब्रूते ‘कुत्र तव कङ्कणम्?’ व्याघ्रो हस्तं प्रसार्य दर्शयति। पान्थोऽवदत् ‘कथं मारात्मके त्वयि विश्वासः?’ व्याघ्र उवाच - ‘शृणु रे पान्थ !’ प्रागेव यौवनदशायामतिदुर्वृत्त आसम् । अनेक गोमानुषाणां वधान्मे पुत्रामृता दाराश्च । वंशहीनश्चाहम् । ततः केन धार्मिकेणाहमादिष्टः - “दानधर्मादिकं चरतु भवान्।” तदुपदेशादिदानीमहं स्त्रानशीलो दाता वृद्धो गलितनखदन्तो कथं न विश्वासभूमिः?

‘तो सर्वप्रथम इस बात का निर्णय ले लूँ।’ फिर उसने उच्च स्वर में कहा- ‘अरे! तेरा कंगन कहाँ है?’ व्याघ्र ने हाथ फैला कर दिखाया। फिर पथिक ने कहा - ‘मैं तुम जैसे हिंसक में कैसे विश्वास करूँ?’ व्याघ्र ने कहा ‘हे पथिक ! सुनो’ पूर्व में मैं बहुत दुष्ट आचरण वाला था (जब) युवास्था में था, अनेक मनुष्यों एवं गौ को मारने के कारण मेरे पुत्र एवं स्त्री मर गए। मैं वंश-हीन हो गया हूँ। उसके बाद किसी धार्मिक के द्वारा मुझे उपदेश दिया गया कि “आप दान-धर्म आदि का आचरण करें।” उनके उपदेश के कारण इस समय मैं स्नान किया हुआ हूँ, दान दे रहा हूँ तथा वृद्धावस्था होने के कारण मेरे नाखून एवं दाँत भी गल चुके हैं, इस स्थिति में मैं विश्वास करने योग्य कैसे नहीं हूँ ?”

यतः क्योकि -

“इज्याध्ययनदानानि तपः सत्यं धृतिः क्षमा ।

अलोभ इति मार्गोऽयं धर्मस्याष्टविधः स्मृतः ॥ हि०मि० ८ ॥

यज्ञ (हवन) करना, वेदों का अध्ययन करना, दान देना, तप करना, सत्य बोलना, धैर्य धारण करना, क्षमाशील होना एवं लोभ न करना, ये सभी धर्म के आठ प्रकार कहे गये हैं।

तत्र पूर्वश्चतुर्वर्गो दम्भार्थमपि सेव्यते।

उत्तरस्तु चतुर्वर्गो महात्मन्येव तिष्ठति ॥ हि०मि० ९ ॥

इन सभी आठ विधियों में पूर्व के चार वर्ग तो दम्भ अर्थात् दिखावे के लिए ही होते हैं, पीछे वाले चार वर्ग केवल महात्माओं में ही होते हैं।

मम चैतावांल्लोभविरहो येन स्वहस्तस्थमपि सुवर्णकङ्कणं यस्मै कस्मैश्चिद्दातुमिच्छामि। तथापि ‘व्याघ्रो मानुषं खादति’ इति लोकप्रवादो दुर्निवारः ।

मैं यहाँ तक लोभरहित हो गया हूँ, जिसके कारण अपने हाथ में धारण किया हुआ कंगन भी किसी को देना चाहता हूँ। फिर भी ‘बाघ मनुष्य को खा जाता है’ यह अवधारणा नहीं मिट सकती है।

यतः = क्योकि कहा भी गया है -

“गतानुगतिको लोकः कुट्टनीमुपदेशिनीम् ।

प्रमाणयति नो धर्मे यथा गोघ्नमपि द्विजम् ॥ हि०मि० १० ॥

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री

91





टिप्पणी

अपनी पुरातन रीत का अनुशरण करने वाला यह संसार धर्म के विषय में कुट्टनी अर्थात् कुलटा के उपदेश में विश्वास नहीं करता है, जबकि गो-हत्या में लिप्त मनुष्य की बात का भी धर्म के विषय में विश्वास कर लेता है।

**मया च धर्मशास्त्राण्यधीतानि** - और मेरे द्वारा तो धर्मशास्त्र का अध्ययन भी किया गया है।

**शृणु च** - और सुनो

**“मरुस्थल्यां यथा वृष्टिः क्षुधार्ते भोजनं तथा ।**

**दरिद्रे दीयते दानं सफलं पाण्डुनन्दन ! ॥ हि०मि० 11 ॥**

हे पाण्डु नन्दन (युधिष्ठिर) ! जिस प्रकार मरुस्थल में वर्षा का होना लाभप्रद होता है, उसी प्रकार दरिद्र को दान देना भी लाभप्रद होता है।

**“प्राणा यथात्मनोऽभीष्टा भूतानामपि ते तथा ।**

**आत्मौपम्येन भूतेषु दयां कुर्वन्ति साधवः ॥ हि०मि० 12 ॥**

जैसे स्वयं के प्राण प्यारे होते हैं, ठीक वैसे ही अन्य प्राणियों को भी स्वयं के प्राण प्यारे होते हैं, इसलिए साधु सज्जन मनुष्य अपने प्राणों के सदृश दूसरों पर भी दया करते हैं।

**अपरं च** - और दूसरी बात यह है -

**“प्रत्याख्याने च दाने च सुखदुखे प्रियाप्रिये ।**

**आत्मौपम्येन पुरुषः प्रमाणमधिगच्छति ॥ हि०मि० 13 ॥**

प्रत्याख्यान, दान, सुख - दुख, प्रिय एवं अप्रिय सभी में पुरुष को अपनी आत्मा के सदृश ही दूसरों को समझना चाहिए।

**अन्यच्च** - और अन्य यह भी बोला गया है -

**“मातृवत्परदारेषु परद्रव्येषु लोष्टवत् ।**

**आत्मवत्सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः ॥ हि०मि० 14 ॥**

जो व्यक्ति पराई स्त्रियों को माता के समान मानता है, दूसरों के धन को कंकड़ के सदृश एवं सभी प्राणियों को स्वयं की आत्मा के समान देखता है, वही पण्डित अर्थात् विद्वान् होता है।

**त्वं चातीव दुर्गतस्तेन तत्तुभ्यं दातुं सयत्नोऽहम् ।**

तुम बहुत अधिक निर्धन हो, इसलिए मैं तुम्हारे लिए देने का प्रयास कर रहा हूँ।

**तथा चोक्तम्** - जैसा कहा गया है -



टिप्पणी

“दारिद्रान्भर कौन्तेय! मा प्रयच्छेश्वरे धनम् ।

व्याधितस्यौषधं पथ्यं, नीरुजस्य किमौषधैः ? ॥ हि०मि० 15 ॥

हे कौन्तेय (युधिष्ठिर) ! धनवानों को धन मत दे, निर्धनों के लिए दान दे। क्योंकि रोगी मनुष्य के लिए दवा गुणकारक मानी जाती है और नीरोगी व्यक्ति के लिए दवा निरर्थक होती है।

अन्यच्च - और दूसरों ने भी कहा है -

“दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।

देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं विदुः ॥ हि०मि० 16 ॥

‘यह देना चाहिए’ इस प्रकार विचार करके अनुपकारी अर्थात् निःस्वार्थ भाव से जो दान दिया जाता है और देश, काल तथा सुपात्र का विचार करके जिस दान को दिया जाता है, वह दान सात्त्विक कहलाता है।

‘तदत्र सरसि स्नात्वा सुवर्णकंकणं ग्रहाण’ । ततौ यावदसौ तद्वचः - प्रतीतो लोभात्सरः स्नातुं प्रविशति तावन्महापङ्के निमग्नः पलायितुमक्षमः । पङ्के पतितं दृष्ट्वा व्याघ्रोऽब्रवीत् ‘अहह! महापङ्के पतितोऽसि । अतस्त्वामुत्थापयामि’ । इत्युक्त्वा शनैः शनैरुपगम्य तेन व्याघ्रेण धृतः ।

‘इसलिए यहाँ सरोवर में स्नान करके स्वर्ण कङ्कण को ग्रहण कर लो।’ उसके बाद जब यह उसकी मीठी-मीठी बातें सुनके लोभ के कारण जैसे ही सरोवर में स्नान करने के लिए प्रवेश करता है, वैसे ही बहुत घने कीचड़ में फंस जाता है और भाग नहीं पाता। कीचड़ में फंसा उसको देखकर व्याघ्र ने कहा अहो! तुम बहुत घने कीचड़ में गिर गये हो, इसलिए मैं तुम्हें उठाता हूँ अर्थात् बाहर निकालता हूँ। यह कहकर शनैः-शनैः समीप जाकर उस व्याघ्र ने उसे पकड़ लिया।

स पान्थोऽचिन्तयत् - तब उस पथिक ने सोचा

“न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणम् न चापि वेदाध्ययनम् दुरात्मनः ।

स्वभाव एवात्र तथातिरिच्यते यथा प्रकृत्या मधुरं गवां पयः ॥ हि०मि० 17 ॥

जो दुष्ट एवं धूर्त आत्मा है उसके धर्मशास्त्र एवं वेदाध्ययन करने से क्या लाभ है? क्योंकि वह स्वभावतः ही अनिष्टकारी है। जिस प्रकार गाय का दूध स्वाभाविक रूप से ही मीठा होता है।

किंच - हाँ और भी, -

अवशेन्द्रियचित्तानां हस्तिस्नानमिव क्रिया।

दुर्भगाभरणप्रायो ज्ञानं भारः क्रियां बिना ॥18॥

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री

93



टिप्पणी

जिनकी इन्द्रियाँ एवं चित्त अपने वश में नहीं होता, उनका किया हुआ व्रत-उपवास आदि क्रिया कर्म हाथी-स्नान के सदृश व्यर्थ हैं। और क्रिया के बिना ज्ञान ठीक वैसा ही है, जैसे पति के बिना (दुर्भाग्य युक्त स्त्री) आभूषण आदि धारण करना भार है।

**तन्मया भद्रं न कृतं यदत्र मारात्मके विश्वासः कृतः।**

इसलिए मेरे द्वारा यह अच्छा नहीं हुआ, कि इस अविश्वसनीय हिंसक में विश्वास किया गया।

**तथा ह्युक्तम् -** कहा गया है -

**“नदीनां शस्त्रपाणीनां नखिनां शृङ्गिणां तथा।**

**विश्वासो नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च ॥ हि०मि० 19 ॥**

नदियों का, हाथ में अस्त्र धारण किये हुए का, नख धारण वाले एवं सींग वाले पशुओं का, स्त्रियों में एवं राजकुलों में कभी भी विश्वास नहीं करना चाहिए।

**अपरं च -** दूसरा भी कहा गया है -

**“सर्वस्य हि परीक्ष्यन्ते स्वभावा नेतरे गुणाः।**

**अतीत्य हि गुणान्सर्वान्स्वभावो मूर्ध्नि वर्तते ॥ हि०मि० 20 ॥**

(प्राणियों में) अन्य दूसरे सभी गुणों की अपेक्षा उसके स्वभाव की परीक्षा की जानी चाहिए, क्योंकि सभी गुणों की अपेक्षा व्यक्ति के स्वाभाविक गुण का अधिक प्रभाव पड़ता है- अर्थात् स्वभाव सर्वोपरि होता है।

**अन्यच्च -** और भी कहा गया है

**“स हि गगनविहारी कल्मषध्वंसकारी,**

**दशशतकरधारी ज्योतिषां मध्यचारी।**

**विधुरपि विधियोगाद्रस्यते राहुणासौ,**

**लिखितमपि ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः ? ॥ हि०मि० 21 ॥**

आकाश में विचरण करने वाले, अंधकार को दूर करने वाले, हज़ारों किरणों को धारण करने वाले, प्रकाशवान नक्षत्रों के मध्य विचरण करने वाले। चन्द्रमा को भी विधि के योग से राहु ग्रस (ग्रहण) कर लेता है, इसलिए यह यथार्थ सत्य है कि मस्तक (भाग्य) पर विधाता के द्वारा जो कुछ भी लिख दिया गया है, उसे मिटाने में कौन समर्थ हो सकता है।



‘इति चिन्तयन्नेवासौ व्याघ्रेण व्यापादितः खादितश्च। अतोऽहं ब्रवीमि- "कङ्कणस्य तु लोभेन" इत्यादि। अतः सर्वथाऽविचारितं कर्म न कर्तव्यम् ।

वह इस बात का चिन्तन कर ही रहा था कि व्याघ्र ने उसे मार डाला और उसे खा लिया। इसीलिए मैं कहता हूँ कि "कंगन के लोभ के कारण पथिक की मृत्यु हुई।" इत्यादि । इसलिए कभी भी बिना विचार किये कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

यतः,- जैसे कहा गया है -

“सुजीर्णमन्त्रं सुविचक्षणः सुतः, सुशासिता स्त्री नृपतिः सुसेवितः ।।

सुचिन्त्य चोक्तं सुविचार्य यत्कृतं, सुदीर्घकालेऽपि न याति विक्रियाम् ।। हि०मि० 22 ।।

भली-भाँति पका हुआ भोजन, प्रतिभावान पुत्र, सुशील पत्नी, भली प्रकार से सेवा से युक्त राजा, चिन्तन-मनन कर कही गई वाणी, भली-भाँति सोच विचार कर किया हुआ कार्य बहुत समय तक नहीं बिगड़ते हैं।

#### बोध-प्रश्न

- मित्रलाभ किस पुस्तक का भाग है?  
(क) हितोपदेश (ख) रघुवंश  
(ग) कुमारसम्भव (घ) नीतिसार
- हितोपदेश किसकी रचना है?  
(क) नारायणपण्डित (ख) विष्णुमित्र  
(ग) भर्तृहरि (घ) कालिदास
- पथिक ने किस वन में वृद्ध व्याघ्र को देखा?  
(क) पूर्ववन (ख) पश्चिम वन  
(ग) दक्षिण वन (घ) उत्तरवन
- स्वर्ण कंकड़ किसके हाथ में था?  
(क) व्याघ्र (ख) गौ  
(ग) पथिक (घ) उक्त सभी
- किसका कार्य सफल होते हुए भी ठीक नहीं माना जाता?  
(क) सज्जन प्राणी (ख) साधु व्यक्ति  
(ग) दुष्ट प्राणी (घ) सभी



टिप्पणी

6. कौन कहता है मैं वंशहीन हो गया हूँ?  
 (क) पथिक (ख) व्याघ्र  
 (ग) कपोत (घ) सभी
7. व्याघ्र धर्म की कितनी विधियाँ बताता हैं?  
 (क) 5 (ख) 10  
 (ग) 8 (घ) 15
8. दान किसको देना चाहिए?  
 (क) सुपात्र (ख) कुपात्र  
 (ग) धनी (घ) सभी को
9. पराया धन कैसा माना जाता है?  
 (क) मिट्टी कंकड़ के समान (ख) अपने धन के समान  
 (ग) स्वर्ण के समान (घ) उक्त सभी
10. पथिक किसमें प्रवेश करके फंस जाता है?  
 (क) सरोवर पंक (ख) द्वार  
 (ग) वृक्ष (घ) कूप
11. गाय के दूध की प्रकृति कैसे मानी है ?  
 (क) मधुर (ख) कटु  
 (ग) तिक्त (घ) लवण
12. हाथी स्नान के समान किसके उपवास – व्रत आदि क्रियाएँ व्यर्थ है?  
 (क) जो आलसी है (ख) जिसकी इन्द्रियाँ एवं चित्त वश में नहीं हैं  
 (ग) जो भोजन नहीं करता (घ) जो स्नान नहीं करता
13. विश्वास करने योग्य कौन नहीं होता?  
 (क) हाथ में पुस्तक लिया हुआ (ख) हाथ में अस्त्र लिया हुआ  
 (ग) हाथ में पुष्प लिए हुए (घ) उक्त सभी
14. सभी गुणों की अपेक्षा सबसे पहले किसकी परीक्षा करनी चाहिए?  
 (क) दया (ख) स्वाभाव  
 (ग) धर्म (घ) दान



## 8.4 सारांश

प्रस्तुत पाठ में कथा के माध्यम से हमने अनेक व्यावहारिक बातों को जाना जैसे अनिष्ट व्यक्ति द्वारा सफल कार्य भी अनिष्टकारी होता है। यज्ञ, दानादि धर्म की विधियों को अपनाने के साथ साथ व्यक्ति का स्वभाव भी अच्छा होना चाहिए। निर्धन को और सुपात्र को दान देना वास्तविक दान होता है न कि कुपात्र एवं धनिक व्यक्ति को दान देना। सभी प्राणियों में स्वयं के स्वरूप को देखना चाहिए, किसी को कष्ट नहीं पहुँचाना चाहिए। जो दुष्ट और दुर्जन प्रकृति का प्राणी होता है, जिसका स्वभाव ही क्रूरता वाला हो, ऐसे व्यक्ति के ज्ञानी होने से भी कोई लाभ नहीं होता उससे नुकसान ही होता है, उससे दूर रहना चाहिए उसकी बातों में नहीं आना चाहिए। इस प्रकार से प्रस्तुत पाठ के माध्यम से हम अपने जीवन में व्यावहारिकता का ज्ञान सीखते हैं।

## 8.5 कठिन शब्दावली

- भद्र – कल्याण
- कंकणम् – कंगन
- व्याघ्र – बाघ
- दारा – पत्नी
- इज्या – यज्ञ
- धृति – धैर्य
- दम्भ – दिखावा
- कुट्टनी – कुलटा
- क्षुधा – भूखा
- द्रव्य – धन
- पंक – कीचड़
- पयः – दूध



टिप्पणी

### 8.6 बोध-प्रश्नों के उत्तर

- |         |         |         |         |         |
|---------|---------|---------|---------|---------|
| 1. (क)  | 2. (क)  | 3. (ग)  | 4. (क)  | 5. (ग)  |
| 6. (ख)  | 7. (ग)  | 8. (क)  | 9. (क)  | 10. (क) |
| 11. (क) | 12. (ख) | 13. (ख) | 14. (ख) |         |

### 8.7 अभ्यास प्रश्न

1. वृद्ध व्याघ्र एवं पथिक के मध्य हुई वार्ता के व्यावहारिक पक्ष का उल्लेख करें।
2. कथा में प्रयुक्त शास्त्रगत उद्धरणों का वर्णन करें।

### 8.8 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- *हितोपदेश*, नारायण पण्डित, हंसा प्रकाशन, जयपुर, संस्करण 2018।
- *पञ्चतन्त्र*, विष्णु शर्मा, गुरुप्रसाद शास्त्री व सीताराम शास्त्री (टीकाकार) बालशास्त्री (सम्पादक), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019।

### 8.9 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- *पञ्चतन्त्रम्*, श्यामाचरण पाण्डेय (व्या.) विष्णु शर्मा, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1975।
- Chandra Rajan, *Panctantram (trans.)* by Penguin Classics, Penguin Books.

---

## इकाई-4

---

पाठ 9 संस्कृत साहित्य में कथा काव्य की परम्परा

पाठ 10 नीति कथा साहित्य - पञ्चतन्त्र एवं हितोपदेश

पाठ 11 नीति साहित्य- कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वात्रिंशिका, पुरुषपरीक्षा







## संस्कृत साहित्य में कथा काव्य की परम्परा

श्री विष्णु प्रसाद सेमवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर

मुक्त शिक्षा विद्यालय

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

### संरचना

- 9.1 अधिगम के उद्देश्य
- 9.2 प्रस्तावना
- 9.3 संस्कृत साहित्य में कथा काव्य की परम्परा
- 9.4 संस्कृत साहित्य में लौकिक कथा साहित्य
- 9.5 कथा साहित्य के भेद
- 9.6 नीति कथा साहित्य का उद्भव एवं विकास
- 9.7 सारांश
- 9.8 कठिन शब्दावली
- 9.9 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 9.10 अभ्यास प्रश्न
- 9.11 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 9.12 सहायक अध्ययनसामग्री

### 9.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप—

- संस्कृत साहित्य विभिन्न साहित्यिक परम्पराओं से परिचित होंगे।
- संस्कृत के कथा काव्य को जानेंगे।
- कथा साहित्य के भेदों से परिचित होंगे।
- नीति कथा के विषय में जानेंगे।
- लोक कथा से अवगत होंगे।



टिप्पणी

## 9.2 प्रस्तावना

साहित्य सदैव जीवन जीने की कला सिखाता है और नीति कथाओं और कहानियों के माध्यम से सत्पात्र बनाने पर जोर दिया जाता है। विभिन्न जीव-जंतुओं के माध्यम से प्रेरणापरक आख्यानों को प्रस्तुत किया जाता है। उन आख्यानों के माध्यम से दया-दान, शिष्टाचार, लोकव्यवहार आदि की शिक्षा प्राप्त होती है।

आईये प्रस्तुत पाठ के माध्यम से नीति साहित्य के उदभव और उसके विकास के क्रम को जानते हैं।

## 9.3 संस्कृत साहित्य में कथा काव्य की परम्परा

भारतीय ज्ञान-विज्ञान की परम्परा सम्पूर्ण विश्व में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इसकी विस्तृत, ज्ञानवर्धक और जीवन में सद्गुणों के विकास, मानवमात्र के कल्याण की कामना का भाव निहित होने के कारण भारत जगद्गुरु की उपाधि से विभूषित रहा है। वैदिक ग्रन्थों से लेकर इतिहास, पुराण, नीति आदि प्रचुर साहित्य के आविर्भाव के मूल में प्राणीमात्र के कल्याण की भावना निहित रही है। संस्कृत भाषा की प्राचीनता से सभी अवगत हैं, इसके दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिकता, राजनैतिक तत्व सर्वत्र उपलब्ध हैं। संस्कृत का लौकिक साहित्य अत्यन्त विशाल है। इसके विविध भाग-विभाग हमारे सम्मुख हैं- काव्य, महाकाव्य, चम्पू काव्य, नाटक, कथा, आख्यायिका आदि।

संस्कृत साहित्य ने संसार को कथा साहित्य की अद्भुत सौगात प्रदान की है। यह कथा साहित्य- लघुकथाएँ, कहानियाँ धर्म, नीति का ज्ञान प्रदान करती हैं। यह बच्चों में सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक तथा नैतिक गुणों का विकास करती हैं। यह ग्रन्थ पञ्चतंत्र, हितोपदेश, वेतालपंचविंशतिका आदि है। विश्व भर में इन ग्रन्थों का व्यापक प्रचार-प्रसार और अनेकों भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

उन लोगों के लिए कथा साहित्य का महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है जो वेद, स्मृति, पुराण आदि को नहीं पढ़ते या फिर किन्हीं कारणों से इनका पठन-पाठन नहीं कर सकते हैं। उन लोगों को नीति, धर्म आदि की शिक्षा प्रदान करने के लिए कथा साहित्य को पल्लवित-पुष्पित किया गया। कथा साहित्य में इतिहास-पुराण से सम्बन्धित ज्ञान-विज्ञान नहीं होता है बल्कि इसकी कथाएँ पूर्णतः काल्पनिक होती हैं।



## 9.4 संस्कृत साहित्य में लौकिक कथा साहित्य

यह कथाएँ अत्यन्त रोचकता से पूर्ण होती हैं कि श्रोता और पाठक को अनायास ही अपनी और आकृष्ट कर लेती हैं। इन कथाओं की घटनाओं में अनेकता, हास्य, विनोद, मौलिकता का समावेश होता है। प्रत्येक घटना या कहानी की एक महत्वपूर्ण शिक्षा होती है जो मानवीय और नैतिक गुणों को पल्लवित-पुष्पित करती है।

यह कथा कहानियाँ समुद्री यात्राओं, तात्कालिक जीवन के पराक्रमों, कुछ कथाएँ आकाश लोक तथा कुछ गन्धर्व लोक का चित्रण करती हैं। कतिपय कथाएँ आश्चर्यपूर्ण घटनाओं का वर्णन करने वाली होती हैं। यह कथाएँ धार्मिक, नीतिपरक, शिक्षात्मक, और उपदेशात्मक होती हैं। यह कथा-कहानियाँ अत्यन्त रोचक और मनोरंजक होती हैं कि बाल-वृद्ध, निर्धन-धनवान, मूर्ख व ज्ञानी, नर-नारी, शिक्षित-अशिक्षित सभी प्रकार के लोगों को आनन्द प्रदान करती हैं। भारतीय कथा साहित्य की वैदेशिक विद्वानों, सहृदयों, सामाजिकों, रसिकों ने भूरी-भूरी प्रशंसा की है।

## 9.5 कथा साहित्य के भेद

संस्कृत साहित्य में कथा साहित्य को दो भागों में विभक्त किया गया है –

1. नीति कथा (didactic tale)
2. लोक कथा (popular tale)

**नीति कथा :** कथा साहित्य में नीति कथाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। नीति साहित्य से तात्पर्य उपदेशात्मक उन जीवन मूल्यों से है जो मनुष्य में मनुष्यत्व का निर्माण, व्यक्ति में व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। भारतीय जीवन दर्शन में नैतिकता, धार्मिकता एवं कर्तव्यपरायणता को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। सुकोमल बुद्धि से युक्त बच्चों में सदाचार, सद्व्यवहार तथा संस्कारयुक्त शिक्षा को उनमें समाविष्ट कराया जाता है, और वह माध्यम है नीति कथा साहित्य। संस्कार और नीति की शिक्षा प्रदान करने के लिए नाना प्रकार की कथा-कहानियाँ विकसित हुई, उन्हें नीति कथा की संज्ञा प्रदान की गई है।

हितोपदेश ग्रन्थ के प्रणेता “नारायण पण्डित” ने कहा है-

**“कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते”।**



टिप्पणी

संस्कृत साहित्य में स्थान-स्थान पर शिष्टाचार, सदाचार आदि के अवबोधन के लिए उपदेशात्मक शैली अपनाई जाती है। विभिन्न काव्य तथा नाट्य ग्रन्थों में सूक्तियों के रूप में नानाविध उपदेशात्मक तत्व प्राप्त होते हैं।

इन उपदेशपरक तत्वों का पाठक और श्रोता के हृदय पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है। भारतीय शास्त्र परम्परा में परम लक्ष्य चतुर्वर्ग को अभिलक्षित किया जाता है। इन नीति कथाओं-कहानियों के द्वारा भी त्रिवर्ग साधन- धर्म-अर्थ- काम की प्राप्ति सम्भव है। इनका उद्देश्य व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना है। प्रकृति और नाना प्रकार के पशु-पक्षियों को पात्र बनाकर गूढ़ से भी गूढ़ तत्व का अत्यन्त सरलता से प्रतिपादन किया जा सकता है। इन कथाओं के माध्यम से कम मति वाले या सुकुमार बुद्धि वाले छात्र भी राजनीति के रहस्यों को आसानी से अवबोधन कर सकते हैं। अत्यन्त प्राचीन समय से साहित्य की यह सुप्रसिद्ध विधा कथा-कहानी गद्य में प्राप्त होती है लेकिन उस की शिक्षा या सार या नैतिक उपदेश पद्य में मिलता है। इनकी लेखन शैली अत्यन्त सरल, सरस, बोध गम्य एवं आकर्षक होती है। यहाँ पर मुख्य कथा के साथ अन्य गौण कथाओं को भी समाविष्ट किया जाता है जो कि मुख्य कथा का ही पोषण करते हैं। इन कथाओं की लोकप्रियता और लोकोपयोगिता इतनी है कि विश्वभर की विभिन्न भाषाओं अंग्रेजी, जर्मन, ग्रीक, लैटिन, फ्रेंच आदि में अनुवाद किया गया है।

## 9.6 नीति कथा साहित्य का उद्भव एवं विकास

भारतीय ज्ञान-विज्ञान की परम्परा में नीति कथा साहित्य का उद्भव प्राचीन समय से ही है। विश्वगुरु भारत की पवित्र धरा पर वैदिक वाङ्मय के प्रादुर्भाव से ही कथा साहित्य का उद्भव दिखाई देता है। विश्व की अमूल्य धरोहर ऋग्वेद के संवाद सूक्त प्राचीन समय की कथाएँ ही हैं- यथा-पुरूरवा-उर्वशी-संवाद, विश्वामित्र-नदी संवाद, सरमा-पणि संवाद आदि। इन विभिन्न लोक या नीति कथाओं में मानव और पशु के मध्य अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है और उन्हीं को आधार बनाकर बोध कथाओं की रचना होती है।

ऋग्वेद में सरमा नामक शुनी का पणियों को दान देने का उपदेश देती है वह साहित्य जगत में सरमा और पणि सम्वाद नाम से अत्यन्त प्रसिद्ध है।



एक वृक्ष पर बैठे हुए पक्षियों की तुलना जीवात्मा और परमात्मा से की है-

**द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।**

**तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति॥**

**श्वेताश्वतरोपनिषद् (ऋग्वेद 1.164.20)**

उपनिषद् ग्रन्थों में विशेष उद्देश्य के साथ जीव-जंतुओं की कथाएँ अत्यन्त पल्लवित-पुष्पित रूप में हैं। छान्दोग्य उपनिषद्(1/12/2) में कुत्तों द्वारा भोजन के लिए अपने नेता का चयन करना। हंसों के मध्य बातचीत से रैक का ध्यानकृष्ट होता है (छान्दोग्य उपनिषद्(4/1))

ऋषि जाबाल के पुत्र सत्यकाम को वृषभ, हंस और मुद्गु (जलीय पक्षी) ब्रह्मविद्या का उपदेश प्रदान करना। (छान्दोग्य उपनिषद्(4/5-8))

उपनिषदों में हैमवती, उमा, यम-नचिकेता आदि की कथाएँ भी उपलब्ध होती हैं। वेदव्यास विरचित महाभारत और पौराणिक साहित्य तो नीति और कथा साहित्य का प्रचुर भण्डार है साथ ही इसमें अत्यन्त प्रसिद्ध कथाएँ- धूर्त मार्जार, हाथी, कछुआ, , चतुर शृगाल, मत्स्य, बिल्ली और चूहे, सोने के अण्डे देने वाली चिड़िया, इत्यादि कथाओं का वर्णन किया गया है। महर्षि पतञ्जलि ने भी व्याकरण शास्त्र के महाभाष्य नामक ग्रन्थ में काकतालीय, अहिनकुलम्, काकोलूकीयम् जैसी उत्कृष्ट नीति कथाओं का उल्लेख किया है।

महात्मा बुद्ध के उपदेश गाथाओं के रूप में थे उन्हें जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए कहानियों का आश्रय लिया और जिस कारण यह बौद्ध जातक कथाएँ अत्यन्त प्रसिद्ध हो गईं।

जैन साहित्य ने भी कथा साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। 'हरिषेण' विरचित 'बृहत्कथाकोश' (932ई.) में जैन सिद्धान्तों को अलग-अलग कथाओं के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। इस प्रकार क्रमबद्ध ढंग से कथा साहित्य, नीति साहित्य का विकसित स्वरूप दिखाई देता है। मनुष्यों और पशु-पक्षियों, जीव-जन्तुओं के मध्य प्रेम-पूर्ण और अत्यन्त प्रगाढ़ आत्मीय सम्बन्ध परिलक्षित होते हैं।

वैदिक साहित्य के प्रादुर्भाव से ही नीति कथा साहित्य का बीजरूप दिखाई देता है और कालान्तर में वह नाना प्रकार के परवर्ती काव्य ग्रन्थों पञ्चतन्त्र और हितोपदेश आदि में पूर्णतः पल्लवित-पुष्पित और विकसित हुआ।

आज की शिक्षा-प्रणाली में भी शिक्षण को रोचक एवं सर्वग्राही बनाने के लिए भी कथा-कहानियों का आश्रय लिया जाता है। यह साहित्य प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक सदा लोकोपयोगी और प्रासंगिक बना हुआ है।

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री

105



टिप्पणी

### बोध-प्रश्न

1. कथा साहित्य के कितने भेद हैं?
2. हितोपदेश ग्रन्थ के प्रणेता कौन हैं?
3. त्रिवर्ग साधन से क्या है?
4. बृहत्कथाकोश के रचनाकार कौन हैं?
5. ऋषि जाबाल के पुत्र का क्या नाम था?
6. व्याकरण शास्त्र के महाभाष्य नामक ग्रन्थ के प्रणेता कौन थे?
7. सरमा नामक शुनी का पणियों को दान देने का उपदेश किस वेद में है?
8. जातक कथाओं का सम्बन्ध किस धर्म से है?
9. पुरुरवा-उर्वशी-संवाद का उल्लेख किस वेद में है?
10. महाभारत के रचनाकार कौन हैं?

### 9.7 सारांश

इस पाठ के माध्यम से हमने संस्कृत साहित्य के कथा साहित्य की विशाल परम्परा के विषय में जानकारी प्राप्त की। वैदिककालीन साहित्य में बीजभूत रूप में संवाद सूक्त आदि के रूप में कथा-कहानियों के माध्यम से नीति साहित्य का उद्भव दिखाई देता है।

तदनन्तर महाभारत, पुराणों, में प्रचुर मात्रा में कथा कहानियों के द्वारा ज्ञानवर्धन, शिष्टाचार आदि की शिक्षा प्रदान की जाती है। जैन और बौद्ध से सम्बन्धित ग्रन्थों के द्वारा भी कथा साहित्य का प्रबल विकास हुआ।

कथा नीति साहित्य का विकसित और पल्लवित-पुष्पित स्वरूप आचार्य विष्णु शर्मा के पञ्चतन्त्र, नारायण पण्डित के हितोपदेश तथा सिंहासनद्वात्रिंशिका, वेतालपञ्चविंशतिका आदि ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। मनुष्य में मनुष्यत्व के विनिर्माण में कथा साहित्य की अत्यन्तपूर्ण भूमिका है।

लौकिक जीवन में व्यवहार, आचार-विचार, सदाचार, शिष्टाचार आदि के परिज्ञान में संस्कृत कथा साहित्य की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है।



## 9.8 कठिन शब्दावली

- काल्पनिक – कल्पनाओं पर आधारित
- पणि – कंजूस व्यापारी
- परिलक्षित – दिखाई देना
- संवाद – बातचीत

## 9.9 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. दो
2. नारायण पण्डित
3. धर्म-अर्थ- काम
4. हरिषेण
5. सत्यकाम
6. महर्षि पतञ्जलि
7. ऋग्वेद
8. बौद्ध
9. ऋग्वेद
10. वेदव्यास

## 9.10 अभ्यास प्रश्न

1. नीति साहित्य से आप क्या समझते हैं ?
2. नीति साहित्य के उद्भव एवं विकास पर विस्तृत निबन्ध लिखिए ।
3. लौकिक कथा साहित्य पर टिप्पणी कीजिए ।
4. कथा-साहित्य का विवेचन कीजिए ।





टिप्पणी

### 9.11 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, श्रीविष्णुशर्माप्रणीत, व्याख्याकार-पाण्डेय, श्रीश्यामाचरण, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, दिल्ली, प्रथम संस्करण: वाराणसी, 1975 ।
- हितोपदेश, श्रीनारायणपण्डितविरचित, सम्पादक-प्रो. बालशास्त्री, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण, 2015 ।
- हितोपदेश, पण्डित जीवानन्द विद्यासागर, सरस्वती प्रेस कलकत्ता ।
- पञ्चतन्त्रम्, श्यामाचरण पाण्डेय (व्या.), विष्णु शर्मा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1975 ।
- M.R. Kale, *Pancatantram* (ed. and trans.), Motilal Banarasidass, Delhi, 1999.
- Chandra Rajan, *Pancatantram* (trans.) Penguin Classics, Penguin Books.

### 9.12 सहायक अध्ययनसामग्री

- रमाशंकर त्रिपाठी, *संस्कृत साहित्य का प्रामाणिक इतिहास*, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।
- उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी।
- बलदेव उपाध्याय, *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, शारदा निकेतन, वाराणसी।
- *A Collection of Ancient Hindu Tales* (ed.), Franklin Edgerton, Johannes Hertel, 1908.
- Krishnamachariar, *History of Classical Sanskrit Literature*, MLBD, Delhi.
- Dasgupta S.N., *A History of Sanskrit Literature: Classical Period*, University of Calcutta, 1977.
- A.B. Keith, *History of Sanskrit Literature* (हिन्दी अनुवाद, मंगलदेव शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली).

स्व-अधिगम

108 पाठ्य सामग्री



## पाठ-10

### नीति कथा साहित्य - पञ्चतन्त्र एवं हितोपदेश

श्री विष्णु प्रसाद सेमवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर

मुक्त शिक्षा विद्यालय

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

#### संरचना

- 10.1 अधिगम के उद्देश्य
- 10.2 प्रस्तावना
- 10.3 संस्कृत साहित्य में नीति कथा साहित्य के प्रमुख ग्रन्थ
- 10.4 पञ्चतन्त्र
- 10.5 पञ्चतन्त्र का उद्देश्य
- 10.6 पञ्चतन्त्र का कथासार
  - 10.6.1 कथामुख
  - 10.6.2 मित्रभेद
  - 10.6.3 मित्रसम्प्राप्ति
  - 10.6.4 काकोलूकीय
  - 10.6.5 लब्धप्रणाश
  - 10.6.6 अपरीक्षितकारक
- 10.7 हितोपदेश
- 10.8 हितोपदेश विषय-वस्तु परिचय
  - 10.8.1 मित्र-लाभ
  - 10.8.2 सुहृद्भेद
  - 10.8.3 विग्रह
  - 10.8.4 सन्धि
- 10.9 सारांश
- 10.10 कठिन शब्दावली
- 10.11 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 10.12 अभ्यास प्रश्न
- 10.13 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 10.14 सहायक अध्ययनसामग्री



टिप्पणी

## 10.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप—

- नीति साहित्य से परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- कथा काव्य की परम्परा को जानेंगे ।
- पंचतंत्र ग्रन्थ का परिचय जानेंगे ।
- हितोपदेश ग्रन्थ के विषय में जा सकेंगे ।
- नीति कथाओं से लोक-व्यवहार की समझ विकसित होगी।
- सामाजिक और नैतिक गुणों का विकास होगा।

## 10.2 प्रस्तावना

संस्कृत भाषा का साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। मानव जीवन को सर्वश्रेष्ठ बनाने के लिए तथा उसमें सामाजिक, नैतिक गुणों को विकसित करने में संस्कृत कथा साहित्य की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। कथा साहित्य के अन्तर्गत लघु-लघु कथाओं के माध्यम से जीवनोपयोगी शिक्षा प्रदान की जाती है। यह कथा-कहानियाँ अत्यन्त रोचक सरल-सरस तथा सहज होती हैं। सामान्य से भी सामान्य व्यक्ति आसानी से समझ सकता है, जिससे उसका सर्वांगीण विकास होता है। मानव को मानव बनाने और उसमें मनुष्यत्व को विकसित करने में कथा साहित्य का विशेष योगदान है।

आचार्य विष्णु शर्मा विरचित *पञ्चतन्त्र* और नारायण पण्डित के *हितोपदेश* ग्रन्थ अपने नीति-वचनों, कथा-कहानियों के माध्यम से मानवीय गुणों, सामाजिक, नैतिकगुणों के विकास के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं।

प्रस्तुत पाठ के माध्यम से हम पञ्चतन्त्र, हितोपदेश जैसे ग्रन्थों का परिचय एवं विषयवस्तु के सम्बन्ध में जानेंगे।



### 10.3 संस्कृत साहित्य में नीति कथा साहित्य के प्रमुख ग्रन्थ

संस्कृत साहित्य का क्षेत्र अत्यन्त विशाल है वहाँ पर वैदिक ग्रन्थों से लेकर पौराणिक, नाटक, गद्य, पद्य कथा, नीति आदि प्रचुर मात्रा पल्लवित पुष्पित हुआ है। इस सम्पूर्ण साहित्य का परम लक्ष्य केवल मानव जीवन का कल्याणमात्र है। मनुष्य का सर्वांगीण विकास हो, वह सामाजिक, राजनैतिक, भावना, संवेदना, दया, करुणा, उत्साह, प्रेम, स्नेह आदि सद्गुणों से परिपूर्ण हो। इन्हीं विचारों और भावों और समस्त मानव जाति के कल्याण के निमित्त कथा साहित्य की अग्रणी भूमिका है। क्योंकि कथा-कहानी सबसे सरल मार्ग है जिसका अनुकरण सरलता से सामान्य बुद्धि से लेकर विशिष्ट बुद्धि वाला व्यक्ति कर सकता है। यहाँ पर हम संस्कृत कथा साहित्य के विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ पञ्चतन्त्र एवं हितोपदेश के विषय में जानेंगे।

### 10.4 पञ्चतन्त्र

विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ पञ्चतन्त्र संस्कृत नीति कथा साहित्य का सर्वाधिक प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थ है इसके प्रणेता सर्वविद्या विशारद, आचार्य प्रवर शास्त्रनिष्णात पं. विष्णुशर्मा हैं। उनकी अवस्था अस्सी वर्ष की थी। उनका यह ग्रन्थ आजकल अपने मूलस्वरूप में तो प्राप्त नहीं होता है। लेकिन वर्तमान में इसके विभिन्न अनुवादों और पुरातन पांडुलिपियों, हस्त लिपियों के आधार पर पञ्चतन्त्र का रचनाकाल तृतीय शताब्दी पूर्व के लगभग माना जा सकता है। यद्यपि काल निर्धारण के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है।

ग्रन्थ के आरम्भ में पण्डित विष्णु शर्मा कहते हैं –

मनवे वाचस्पतये शुक्राय पराशराय ससुताय ।

चाणक्याय च विदुषे मनोऽस्तु नयशास्त्रकर्तृभ्यः ॥

सकलार्थशास्त्रसारं जगति समालोक्य विष्णुशर्मदम् ।

तन्त्रैः पञ्चभिरेतच्चकार सुमनोहरं शास्त्रम् ॥

(कथामुख, 2-3)

यहाँ पर आचार्य मनु, बृहस्पति, शुक्र, व्यास, पराशर, चाणक्य और राजनीतिशास्त्र के अन्य निष्णात विद्वानों को नमन करने के साथ-साथ यह भी उद्घोषणा कर रहे हैं कि सम्पूर्ण

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री



टिप्पणी

अर्थशास्त्र का सार लेकर पाँच तन्त्रों में समन्वित दिव्य मनोहर शास्त्र अर्थात् पञ्चतन्त्र का प्रणयन किया जा रहा है।

आचार्य चाणक्य के अर्थशास्त्र का प्रभाव पञ्चतन्त्र पर स्पष्टतः दिखाई देता है। इस आधार पर पञ्चतन्त्र का रचनाकाल आचार्य चाणक्य पश्चात् तीसरी शताब्दी पूर्व के माना जाता है। आचार्य विष्णु शर्मा विरचित पञ्चतन्त्र के विभिन्न संस्करण अलग-अलग प्रदेशों में और अलग-अलग समय पर प्राप्त हुए हैं। इस कथा के चार संस्करण प्राप्त होते हैं-

1. पंचतंत्र का प्रथम संस्करण का अनुवाद सीरियन तथा अरबी के रूप में प्राप्त होता है। सीरियन अनुवाद में पञ्चतन्त्र की संज्ञा कलिलग और दमनग है और अरबी भाषानुवाद में इसे कलिलह और दिमनह नाम से प्रसिद्ध है।
2. द्वितीय संस्करण गुणाढ्य की बृहत्कथा में हुआ जो मूल स्वरूप में तो उपलब्ध नहीं है। ग्यारहवीं शदी के आचार्य क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामन्जरी तथा सोमदेव विरचित कथासरित्सागर भी इसी के अनुवाद माने जाते हैं।
3. तन्त्राख्यायिका एवं उससे सम्बद्ध जैन कथाएँ पञ्चतन्त्र का ही संस्करणात्मक स्वरूप हैं। डॉ० हटेल के अनुसार यह मूल पञ्चतन्त्र के सर्वाधिक समीप है और इसी संस्करण को आधार बनाकर पहलवी भाषा में अनुवाद किया गया था। जैन विद्वान् पूर्णमद्र सूरि ने सन् 1966 में इसका परिवर्धन किया।
4. चतुर्थ संस्करण के रूप में उत्तरी एवं दक्षिणी पञ्चतन्त्र है जिसका प्रतिनिधित्व नेपाली पञ्चतन्त्र या हितोपदेश करता है।

### 10.5 पञ्चतन्त्र का उद्देश्य

नीति का उद्देश्य सद्मार्ग की ओर प्रशस्त करना है। नीति साहित्य के शिरोमणि ग्रन्थ पञ्चतन्त्र का प्रमुख उद्देश्य बालकों को नैतिक, धार्मिक और व्यवहार परक श्रेष्ठतम शिक्षा प्रदान करना है।

इसके लिए ग्रन्थ के प्रणेता ने कहानियों के रूप में पशु-पक्षियों को माध्यम बनाया है। इन कहानियों का वर्णनीय विषय लोक में प्रतिदिन का वाग्व्यवहार, करणीय-अकरणीय का उपदेश, कर्तव्यपालन, मित्र की रक्षा, वचन का अनुपालन आदि महत्वपूर्ण गुणों का वर्णन किया गया है इसके अतिरिक्त छल-कपट, प्रपंच, अहंकार, अन्तःपुर के छल-छद्मपूर्ण व्यवहार और स्त्रियों की चरित्रहीनता आदि दोषों का भी वर्णन किया गया है।

स्व-अधिगम

112 पाठ्य सामग्री



ग्रन्थ रोचकता, सरलता, सहजता तथा मनोरंजक, हास-परिहास मुहावरों से युक्त तथा ललित एवं हृदयस्पर्शी है। ग्रन्थ की वाक्यों की संरचना अत्यन्त सरल व सुबोध है। सम्पूर्ण ग्रन्थ की भाषा विषयानुरूप है।

वस्तुतः पञ्चतन्त्र की कथाओं का प्रणयन गद्य में हैं लेकिन विषयवस्तु को अत्यधिक रोचक एवं प्रभावशाली बनाने के लिए प्रचुर मात्रा में पद्यों का भी समावेश किया गया है। स्थान-स्थान पर व्यंग्यपरक एवं अलंकृत शिल्प का प्रयोग अत्यन्त मनोहर एवं दर्शनीय है। विभिन्न प्रकार के दोषों जैसे- नौकरों का छल-कपटपूर्ण व्यवहार, आडम्बर, राजाओं की अविवेकिता, स्त्रियों का चरित्र, चापलूसों की स्वार्थसिद्धि, भूतों का छिद्रान्वेषण, आदि अनेक मानवीय दुर्गुणों को व्यंग्यात्मकशैली में दर्शाया गया है। लघु-दीर्घ वाक्यों को सामान्य बातचीत की शैली में संजोया गया है।

## 10.6 पञ्चतन्त्र का कथासार

आचार्य विष्णु शर्मा विरचित पञ्चतन्त्र पाँच तन्त्रों में गुम्फित ग्रन्थ है। इसको पञ्चोपाख्यान भी कहा जाता है-

1. मित्रभेद
2. मित्रसम्प्राप्ति
3. काकोलूकीय
4. लब्धप्रणाश
5. अपरीक्षितकारक

इन पाँचों तन्त्रों का संक्षिप्त कथानक निम्न प्रकार से है-

### 10.6.1 कथामुख

दक्षिणी भारत के महिलारोष्य नामक नगर के सर्वगुणसम्पन्न राजा अमरशक्ति के तीन महामूर्ख पुत्र शास्त्रज्ञानशून्य, विवेकहीन एवं दुर्व्यसनों से युक्त थे। अपने पुत्रों की इस प्रकार की दशा देखकर राजा अत्यन्त दुखी रहते थे। अपने पुत्रों को शास्त्रज्ञान और लौकिक व्यवहार में निपुण बनाने के लिए किसी योग्य आचार्य की आवश्यकता थी। राजा अपने तीनों पुत्रों को उनके संकल्प के अनुसार सौंप देते हैं। उन्होंने छः महीने में ही राजकुमारों को सदाचारी, व्यवहारी, नीतिसम्पन्न



टिप्पणी

बनाकर अपनी भीष्म प्रतिज्ञा को पूर्ण कर दिया। उन राजकुमारों को सर्वगुणसंपन्न बनाने के लिए पञ्चतन्त्र ग्रन्थ का प्रणयन किया था।

### 10.6.2 मित्रभेद

पञ्चतन्त्र का यह प्रथम तन्त्र है इस मित्रभेद प्रकरण में पिङ्गलक नामक शेर तथा संजीवक बैल का आख्यान मुख्य कथा के रूप में है और तथा इसके साथ ही तेईस अन्य उपकथाएँ हैं।

पिङ्गलक नामक सिंह विपत्ति के समय अपने मालिक द्वारा त्यागे हुए संजीवक नामक बैल को अपना संरक्षण प्रदान करता है। दोनों में घनिष्ठ मित्रता हो जाती है। संजीवक के सुभाषित के प्रभाव से शेर अपना शिकार करना छोड़ त्याग देता है। शेर के विश्वासपात्र मन्त्रियों करटक एवं दमनक नामक सियारों को दोनों की मित्रता बिल्कुल भी अच्छी नहीं लगती थी। कुछ समय पश्चात् दोनों सियार मन्त्रियों ने अत्यन्त धूर्ततापूर्ण छल-प्रपञ्चों से शेर और बैल के मध्य अविश्वास उत्पन्न करा दिया अर्थात् दोनों मित्रों में भेद उपस्थित कर दिया जाता है। उनकी शत्रुता इतनी अधिक बढ़ जाती है कि सिंह बैल की हत्या कर देता है। बैल को मारने के बाद जब सिंह अपने रक्तरञ्जित दोनों पञ्जों को देखता है तो उसे भयानक पश्चात्ताप होता है, लेकिन दोनों सियार अनेक प्रकार से समझा-बुझा कर शेर को सान्त्वना देते हैं और उसके प्रधानमन्त्री पद पर अपने को स्थापित बनाये रखते हैं। इस तन्त्र की शिक्षा यह है कि किस प्रकार दो मित्रों के मध्य फूट डलवा कर अपना उल्लू सीधा किया जाय। हालाँकि नैतिकता की दृष्टि से यह कार्य अनैतिक है लेकिन राजनैतिक नजरिये से यह सर्वथा समीचीन है। यहाँ पर पिङ्गलक और संजीवक बैल की कथा मुख्य कथा है और इसके साथ तेईस अवान्तर कथाएँ भी हैं जो कि मुख्य कथा को प्रभावशाली बनाती हैं। इस प्रथम तन्त्र में पशु-पक्षियों से सम्बन्धित अनेको मनोहर, नीतिप्रद और हृदय को आनन्दित करने वाली कहानियाँ विद्यमान हैं।

### 10.6.3 मित्रसम्प्राप्ति

प्रस्तुत तन्त्र में एक मुख्य कथा और उसकी सात अवान्तर कथाएँ हैं। इस प्रकरण में मित्र के सन्दर्भ में कहा है कि - सभी के लिए उपयोगी और विपत्ति में साथ देने वाले मित्र ही बनाने चाहिए।

मुख्य कथा का सारांश इस प्रकार से है-

भोजन की तलाश में जब कबूतर शिकारी के जाल में फँस जाते हैं तब कबूतरों का राजा चित्रग्रीव जाल में फँसे समूह के अन्य कबूतरों को उस जाल के साथ ही उड़ने का निर्देश देता है और अपने प्रिय मित्र हिरण्यक नामक चूहे के घर जाकर उससे कबूतरों को बन्धन से मुक्त



करवाता है। सर्वप्रथम जब हिरण्यक अपने मित्र चित्रग्रीव का बन्धन काटने को तत्पर हुआ तो चित्रग्रीव कहने लगा- हे मित्र ! सबसे पहले मेरे अनुचरों को बन्धन मुक्त करो उसके बाद ही मेरा बन्धन काटना। चूहे ने कबूतरों को बन्धनमुक्त करने के पश्चात् लघुपतनक नामक कौआ की चूहे और उसके पुरातन साथी मित्र मन्थरक नामक कछुए से मित्रता हो जाती है। हिरण्यक नामक मूषक उसे अपना पहला घर छोड़ने का कारण बतलाता है।

कथा इस प्रकार से है - एक ताम्रचूड़ नामक संन्यासी भिक्षाटन से प्राप्त भिक्षा को चूहे से बचाने के अथक प्रयत्न के बावजूद भी चूहा उसकी भिक्षा का भक्षण कर देता है। संन्यासी का एक मित्र उसको बताता है कि चूहे की इस धृष्टता के पीछे निश्चित ही कोई कारण विशेष है। तब संन्यासी चूहे के उस कारण का अन्वेषण करना प्रारम्भ करता है। अन्वेषण करने पर मालूम होता है कि मूषक के पास इसका कारण संचित स्वर्ण-भण्डार है। संन्यासी ने उस स्वर्णभण्डार को हटा लिया, जिससे चूहा अत्यन्त दुर्बल हो जाता है और अपने सेवकों का भरण-पोषण करने में असमर्थ हो जाने के कारण सेवकों ने उसका त्याग कर दिया। कालान्तर में मूषक के चतुर्थ मित्रता चित्रांग नामक मृग से हो जाती है। एक दिन घूमते हुए वह चित्रांग मृग एक जाल में फँस जाता है। वह भी अपने मित्रों कबूतर, चूहा, कौआ और कछुआ के माध्यम से येन-केन प्रकारेण बन्धन से मुक्त हो जाता है। लेकिन तत्क्षण शिकारी के आगमन से कछुआ भयभीत हो जाता है और मृग मृत्यु का बहाना कर जमीन पर लेट जाता है। कुछ समय पश्चात् हिरन चालाकी से छल से कछुआ को भी मुक्त करवा लेता है।

प्रस्तुत तन्त्र में- कबूतर, चूहा, कछुआ, कौआ और हिरण ने परस्पर मित्रता के भाव से एक-दूसरे की सहायता कर समस्त विपत्तियों से छुटकारा पाया। सच्चे मित्र का महत्व और उसकी अनिवार्यता का प्रतिपादन किया है। अतः यह तन्त्र मित्रसम्प्राप्ति नाम से प्रसिद्ध है।

#### 10.6.4 काकोलूकीय

पञ्चतन्त्र के इस तन्त्र में एक मुख्य कथा तथा अन्य सत्रह उपकथाएँ हैं। यहाँ पर विग्रह (युद्ध) तथा सन्धि के विषय में विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। कौवों के अधिपति मेघवर्ण एवं उल्लुओं के राजा अरिमर्दन की कहानी है।

एक वटवृक्ष पर कौवों का राजा मेघवर्ण अपने अन्य कौवों के साथ निवास करता था। तथा निकट की ही पहाड़ियों में अरिमर्दन नामक उल्लुओं का राजा अपने साथी उल्लुओं के समूह के साथ रहता था। प्रतिदिन रात्रि के समय दिवान्ध वह उलूकराज अरिमर्दन वटवृक्ष के चारों ओर घूमकर प्रतिदिन रात्रिबेला में किसी-न-किसी कौवे को मार डालता था। उल्लुओं की इस प्रकार





टिप्पणी

की हरकतों से परेशान मेघवर्ण अपने मन्त्रियों को बुलाकर विचार-विमर्श कर पूछता है कि ये उल्लू हम कौवों से बिना किसी कारण के वैर क्यों रखते हैं? और इसका प्रतीकार कैसे किया जाय? तब मन्त्री स्थिरजीवी कहता है कि पूर्व काल में जब पक्षियों के राजा के चयन के समय सर्वसम्मति से उल्लू को राजा बनाने का प्रस्ताव रखा गया था तो उस समय एक कौवा ने उल्लू को भयावह बतलाकर उसके राजा चुने जाने का विरोध दर्ज करवाया था तथा अन्य पक्षियों को अपने पक्ष में करके उल्लू का राज्याभिषेक का कार्यक्रम स्थगित करवा दिया था। तब उसी समय उल्लू ने कौओं से प्रतिशोध लेने की प्रतिज्ञा की और तभी से वह हम कौओं के साथ वंश परम्परागत वैर रखते हैं। तत्पश्चात् कौवों का मन्त्री स्थिरजीवी उल्लूओं के सामने एक शरणागत के रूप में प्रस्तुत होने की युक्ति का परामर्श देता है। इस कार्य हेतु राजा मेघवर्ण की सहमति के अनन्तर कौवा (स्थिरजीवी) मन्त्री मेघवर्ण के साथ बनावटी लड़ाई लड़कर स्वयं को रक्तरंजित(घायल) की दशा में अपने राजा एवं समूह के अन्य कौवों के उस आश्रयस्थल का परित्याग कर किसी अन्य स्थल पर चले जाने के पश्चात् बाद वह स्वयं उल्लूकराज की शरणागति में रहने लगा। और वहाँ पर युक्ति और बुद्धिपूर्वक उसका विश्वास जीत कर वहाँ निवास करने लगा। शनैः शनैः कौवा (स्थिरजीवी) ने गुफा में अपना घोंसला बनाने के बहाने से वहाँ घास-फूस-तिनकों का ढेर इकट्ठा कर दिया और मौका मिलते ही उसमें आग लगाकर समस्त उल्लू-शत्रुओं को घर समेत नष्ट कर दिया। तदनन्तर कौवों के राजा मेघवर्ण ने अपने मन्त्री को पुरस्कृत किया और निर्भय होकर निवास करने लगा।

### 10.6.5 लब्धप्रणाश

यहाँ मुख्यतया करालमुख नामक मगर एवं रक्तमुख बन्दर की कथा तथा ग्यारह अवान्तर कथाओं का उल्लेख है। रक्तमुख नामक बन्दर प्रतिदिन मगर को मधुर-मधुर जम्बूफल देता था। मगर उन फलों को आनन्दपूर्वक खाता था और बचे हुए जामुन के फलों को घर जाकर अपनी पत्नी को खिलाता था। मगर और वानर दोनों की इतनी घनिष्ठ मित्रता देखते हुए मगर की पत्नी ने सोचा की जो प्रतिदिन इतने मधुर फलों का भक्षण करता है तो उसका हृदय कितना मधुर होगा ! एक दिन उसने मगर से जिद करके कहा हे स्वामिन् ! मुझे उस बन्दर के हृदय को लाकर दो जिसका भक्षण कर मैं जरा-मरण से रहित हो सकूँगी। मगर ने पत्नी से कहा हे प्रिये! उसने मुझे हमेशा जामुन के फल देकर उपकृत किया, और वह मेरे भ्राता के समान है। मैं उसकी हत्या कभी नहीं कर सकता। लेकिन उसकी पत्नी ने सभी बातों को अनसुना कर आत्महत्या की धमकी भी दे डाली। बेचारा मगर स्तीहठ के सम्मुख विवश था उसने अत्यन्त दुःखी होकर वानर के पास आकर अपने मधुर-मधुर वचनों से फुसला कर अपने घर आने के लिए तैयार किया। वानर भी उसकी



पीठ पर बैठ गया। जब बीच समुद्र में पहुँचे तो मगर ने उसे वास्तविकता बताई कि उसकी पत्नी उसका कलेजा खाना चाहती है। जैसे ही वानर को मगर की इस योजना के विषय में जानकारी मिली। वैसे ही प्रत्युत्पन्नमति वानर ने मगर से कहा कि मैं तो अपने हृदय को हमेशा जामुन के वृक्ष पर ही रखता हूँ। यदि पहले से जानकारी होती तो अपने हृदय को साथ ही लेकर आता। मगर भी आनन्द के साथ वानर को लेकर वापस जामुन वृक्ष के समीप पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही वानर एक लम्बी छलांग लगाकर जामुन वृक्ष पर चढ़ गया और विचार करने लगा कि चलो आज भाग्यवशात् प्राण तो बच गये। पुनः मगर उससे हृदय की माँग करता है, लेकिन वानर ने हँसते हुए उसकी भर्त्सना की और कहा- हे मूर्ख, विश्वासघातिन् ! तुझे धिक्कार है। क्या कभी किसी को दो हृदय होते हैं? इसी क्षण यहाँ से चले जाओ। फिर यहाँ कभी मत आना। वह मगर वानर से पुनः मित्रता करना चाहता है लेकिन बन्दर ने भी उसे अनेक आख्यानो-उपाख्यानो तथा नीतिवचनों को सुनाकर खूब फटकारा और धिक्कारा। इस सम्पूर्ण प्रकरण के अन्त में पुरुषार्थजन्य लक्ष्मी के महत्व का वर्णन करते हुए यह तन्त्र संपन्न हो जाता है।

कहानी से शिक्षा मिलती है कि बुद्धिमान व्यक्ति अपने बुद्धिबल से विपरीत से भी विपरीत परिस्थितियों से भी निकल जाता है। और मूर्ख अपने हाथ में आई वस्तु से भी वंचित हो जाता है। इसलिए प्रत्येक विपरीत परिस्थिति का सामना धैर्यपूर्वक करना चाहिए।

### 10.6.6 अपरीक्षितकारक

यह अपरीक्षितकारक पञ्चतन्त्र का अन्तिम तन्त्र है इसके अन्तर्गत एक 'क्षपणककथा' प्रमुख कथा है और चौदह अन्य अवान्तर उपकथाएँ हैं।

मुख्य कथा का सारांश है- मणिभद्र नाम का वणिक् अपनी दरिद्रता के कारण अत्यन्त दुःखी था एक रात्रि को स्वप्न में जैन संन्यासी क्षपणक दर्शन देकर कहता है कि वह उसके पूर्वजों द्वारा संचित धन है वह अगले दिन उसके घर आएगा और जैसे ही वणिक् उसके सिर पर डंडे से प्रहार करेगा तो वह स्वर्णराशि में परिवर्तित हो जायेगा।

अगले दिवस मणिभद्र की पत्नी ने अपने पैरों में महावर आदि अलंकरण को लगाने के निमित्त एक नाई को बुलाया था। तत्क्षण स्वप्न में दृश्यमान जैन संन्यासी वहाँ उपस्थित हो गया। वणिक् ने प्रफुल्लित हृदय से समीपस्थ रखे हुए दण्ड से जैन संन्यासी के शिर पर प्रहार किया और वह उसी समय स्वर्णराशि में परिवर्तित धरती पर गिर पड़ा। यह दृश्य देखकर नाई आश्चर्यचकित हो गया उसने विचार किया कि क्षपणक दण्ड प्रहार से सोने के हो जाते हैं। अग्रिम दिवस से मठ से जैन संन्यासियों को भोजन के लिए निमंत्रण दे आया क्षपणक के गृह में प्रवेश करते ही दण्ड



टिप्पणी

का प्रहार करना प्रारम्भ किया वे स्वर्णिममय तो नहीं हुए लेकिन लहलुहान होकर चीखने-चिल्लाने लगे और कुछ तो वहीं पर मृत्यु को प्राप्त हो गये। नगर के कोतवाल उसे पकड़कर न्यायालय में लेकर गये और न्यायाधीश द्वारा उसे मृत्युदण्ड की सजा दे दी जाती है।

अन्त में श्लोक द्वारा शिक्षा प्रदान की गई है-

**‘मन्त्रे तीर्थे द्विजे देवे दैवज्ञे भेषजे गुरौ।**

**यादृशी भावनायस्य, सिद्धिर्भवति तादृशी’ ॥१९८॥ अपरीक्षितकारक**

मन्त्र में, तीर्थस्थान के प्रति, ब्राह्मणों और देवताओं के सम्बन्ध में, ज्योतिषियों में, औषधियों में तथा गुरु के प्रति जिस व्यक्ति की जैसी भावना होती है उसके अनुरूप ही उसे फल की प्राप्ति होती है।

**‘जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरत देखी तिन वैसी’**

प्रस्तुत प्रकरण से शिक्षा प्राप्त होती है कि किसी भी कार्य को बिना सम्यक विचार-विमर्श, बिना परीक्षण के नहीं करना चाहिए क्योंकि उसका परिणाम अनिष्टकारी ही होता है। बिना विचार के एवं बिना भली-भाँति देखे या सुने गये किसी कार्य को करने वाले मनुष्य को उसके कार्य में सफलता तो नहीं मिलती बल्कि जीवन में नाना प्रकार की विपत्तियों का सामना करना पड़ता है।

पञ्चतन्त्र के ग्रन्थकार की बुद्धिमत्ता एवं नीतिमत्ता ग्रन्थ के प्रत्येक पृष्ठ पर परिलक्षित होती है। अत्यन्त साधारण ढंग से पशु-पक्षियों की कहानियों को आधारित कर सम्पूर्ण मानवीय ज्ञान को समाविष्ट किया गया है। जीव-जन्तु पशु-पक्षी भी शिष्टाचार, सदाचार, नीति और लौकिक व्यवहार के सन्दर्भ में चर्चा करते हैं और शास्त्र सम्मत समस्त धर्मग्रन्थों के सूक्ष्मातिसूक्ष्म विषयों पर भी विचार-विमर्श करते हैं।

पञ्चतन्त्र अपनी लोकप्रियता, नैतिकता, सरलता, सहजता और रोचकता आदि अनेक गुणों के कारण आज केवल भारतीय साहित्य का अंग नहीं है अपितु सम्पूर्ण विश्व साहित्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग बन गया है।

## 10.7 हितोपदेश

नारायण पण्डित ने हितोपदेश ग्रन्थ की रचना की जिसमें सुगम, रोचक एवं शिक्षाप्रद कथाओं का अत्यन्त सरलता से प्रतिपादन किया। वर्तमान सन्दर्भ में हितोपदेश ग्रन्थ का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है यह पथ-प्रदर्शक नीति ग्रन्थ है।



इस ग्रन्थ का मूल आचार्य विष्णु शर्मा विरचित पञ्चतन्त्र ग्रन्थ है इसका उल्लेख हितोपदेश की प्रस्तावना में किया गया है- 'पञ्चतन्त्रात्तथाऽन्यस्माद् ग्रन्थादाकृष्य लिक्ष्यते'। कथा साहित्य की परम्परा में पञ्चतन्त्र के बाद हितोपदेश का उल्लेख सर्वत्र प्राप्त होता है। मान्यता है कि यह हितोपदेश ग्रन्थ पञ्चतन्त्र का ही एक स्वतन्त्र भाग है।

हितोपदेश के प्रणेता नारायण पण्डित बंगाल के शासक राजा धवलचन्द्र के आश्रित कवि थे। इस ग्रन्थ की 1373 ई. की एक पाण्डुलिपि भी प्राप्त हुई है इस आधार पर इसका रचना काल चौदहवीं शताब्दी से पूर्व का माना जा है। हितोपदेश ग्रन्थ को चार भागों में विभाजित किया गया है- 1. मित्रलाभ 2. सुहृद्भेद 3. विग्रह तथा 4. सन्धि ।

**मित्रलाभः सुहृदभेदो विग्रहः संधिरेव च ।**

**हितोपदेश नामायं चतुर्धा सुविभाजितः ॥**

हितोपदेश में 39 कथाएँ और साथ ही प्रत्येक भाग की चार मुख्य कथाओं के आधार पर 43 कथाएँ हैं। इस ग्रन्थ में 726 श्लोक हैं और सर्वत्र पञ्चतन्त्र की शैली का ही अनुशरण किया गया है। 25 कथाएँ सीधे पंचतन्त्र से ली गयी हैं। गद्य भाग से अधिक पद्य भाग है उन पद्यों में से कतिपय कामन्दकीय नीतिसार से उद्धृत हैं। इसकी कुछ कथाएँ महाभारत, शुकसप्तति तथा वेतालपञ्चविंशति से भी उद्धृत हैं। हितोपदेश की भाषा अत्यन्त सरल, सहज और उपदेशात्मक है। यहाँ प्रस्तुत पद्य बहुत ही शिक्षाप्रद हैं। विभिन्न कथाओं के शीर्षक उनसे मिलने वाली शिक्षा के आधार पर ही हैं –

यथा-

**उपायेन हि यच्छत्यं न तच्छक्यं पराक्रमः,**

**सहसा विदधीत न क्रियाम्,**

**लोभो मूलमनर्थानाम्,**

**मतिरेव बलाद् गरीयसी इत्यादि ।**

इस ग्रन्थ की कथा-कहानियों का गद्य सरल-सुबोध हैं ।

यथा- 'कस्मिंश्चित्तरी वायसदम्पती व्यवसताम् । तयोरपत्यानि तरु-कोटराव- स्थितेन कृष्णसर्पेण खादितानि । ततो बायस्याह- स्वामिन् त्यजतामयं तरुः । अत्र यावदयं कृष्णसर्वस्तिष्ठति तावदावयोः संततेजर्जीवनं न सुरक्षितम्' इत्यादि ।



टिप्पणी

## 10.8 हितोपदेश विषय-वस्तु परिचय

हितोपदेश के प्रणेता नारायण पण्डित हैं। यह ग्रन्थ अत्यन्त सरल और सरस है। इसकी विषय-वस्तु का विभाजन चार भागों में किया गया है- मित्रलाभ, सुहृद्भेद, विग्रह तथा सन्धि। इन चारों भागों का संक्षिप्त वर्णन क्रमशः निम्न प्रकार से है-

### 10.8.1 मित्र-लाभ

हितोपदेश का यह भाग मित्रता के महत्व पर प्रकाश डालता है- जीवन में मित्रता का विशेष महत्व है। इसलिए अनेक मित्रों को बनाना चाहिए। मित्र सुख-दुःख, लाभ-हानि साधन सहित हो या साधन रहित सभी प्रकार से उपयोगी होते हैं- मित्र लाभ के शुरुआत में ही कहा है-

**असाधनाः वित्तहीनाः बुद्धिमन्तः सुहृत्तमाः ।**

**साधयत्याशु कार्याणि काककूर्ममृगाखुवत् ॥**

उत्तम एवं बुद्धिमान मित्र साधन व धन आदि से विहीन होने पर भी कौए, कछुए, हिरण और चूहे के सदृश अपने कार्यों को शीघ्रता से पूर्ण कर लेते हैं। मित्रता के महत्व को बताते हुए कहा है कि 'जीवन में सरल-सहज और सच्चा मित्र प्रारब्ध से प्राप्त होता है' -

**स्वाभाविकं यन्मित्रं भाग्येनोपजायते ।**

**तदकृत्रिमसौहार्दं मापत्स्वपि न मुञ्चति ॥**

सहजता और सरलता से स्नेह करने वाला मित्र भाग्य (प्रारब्ध) से ही प्राप्त होता है। किसी प्रकार की विपत्ति में सदैव साथ देता है। मित्रता एक अनमोल रत्न की तरह है और उसके प्रीति का रसायन अत्यन्त दुर्लभ होता है। यह हृदय को आनन्द और नेत्रों के लिए सुख प्रदान करने वाला होता है। सुख-दुःख में या संकट के समय साथ देने वाले मित्र दुर्लभ होते हैं, जबकि धन के लोलुप मित्र तो सब जगह ही मिल जाते हैं। प्रस्तुत मित्र-लाभ प्रकरण में चित्राङ्ग हिरण शिकारी के फंदे में फंस जाता है। उस समय उसके मित्रों लघुपतनक कौए, मन्थर कछुए तथा हिरण्यक चूहे ने सावधानी से योजना बनाकर उसको संकट से निकाल लिया।

**शोकरातिभयत्राणं प्रीति विश्रम्भाजनम् ।**

**केन रत्नमिदं सृष्टं 'मित्रमि' त्यक्षरद्वयम् ॥**



मित्र के महत्व का प्रतिपादन किया गया है। मित्र शोक, कष्ट और भय से रक्षा करता है, प्रेम और विश्वास सदैव बनाये रखता है।

### 10.8.2 सुहृद्भेद

प्रस्तुत प्रकरण में मित्रों के मध्य भेद(फूट) डलवाने सम्बन्धी नीति का वर्णन है। पिङ्गलक नामक सिंह जंगल का राजा है। उसके दमनक और करटक नामक दो गीदड़ मंत्री हैं। ये दोनों गीदड़ मिलकर पिङ्गलक की मित्रता संजीवक नामक बैल से करवा देते हैं। धीरे-धीरे शेर और बैल की मित्रता प्रगाढ़ होती है। लेकिन गीदड़ों की स्वार्थ सिद्धि में विघ्न उत्पन्न होता है तो वे उनके मध्य फूट डलवा देते हैं। सुहृद्भेद प्रकरण के आरम्भ में कहा है –

**वर्धमानो महास्नेहो मृगेन्द्रवृषभयोर्वने।**

**पिशुतेनातिलुब्धेन जम्बुकेन विनाशितः ॥**

दोनों मित्रों में फूट डलवाने के विषय में करटक से दमनक कहता है-

**“मित्र! अनयोः सौहार्द मया कारितं तथा मित्रभेदो मया कार्यः”**

“हे मित्र ! जिस तरह से मैंने इन दोनों के मध्य मित्रता करवाई, वैसे ही मैं इन दोनों में फूट डलवा दूँगा।”

इस संसार में कुचक्र और चालाक लोगों के लिए सब सम्भव है-

**अतथ्यान्यपि तथ्यानि दर्शयत्यपेशलाः ।**

**समे निम्नोन्नतानीव चित्रकर्मविदो जनाः ॥**

चालाक व्यक्ति झूठ को भी सच बना देते हैं- यथा -जिस प्रकार चित्रकार लोग समतल भूमि को भी ऊँचा नीचा दिखा देते हैं।

सुहृद्भेद या मित्रता के कलह में कूटनीति और जासूसी की बातें छिपी रहती हैं। लेकिन बुद्धिमान व्यक्ति वह है- जो बिना किसी नुकसान के उन विकट परिस्थितियों से निकल जाये।

**“उत्पन्नेष्वपि कार्येषु मतिर्यस्य न हीयते।”**

अर्थात् संकटकालीन स्थितियों में भी जिसकी मति का हास नहीं होता, वह संकटों से पार पा लेता है। सुहृद्भेद में गीदड़ों की चालाकी के कारण सिंह और बैल में लड़ाई होती है और अन्त में शेर बैल को मार देता है। बैल को मार कर शेर को दारुण दुःख होता है।



टिप्पणी

लेकिन दोनों गीदड़ शेर को सांत्वना देते हैं-

**धर्मार्थकामतत्त्वज्ञो नैकान्तकरुणो भवेत् ।**

**न हि हस्तस्थमप्यत्र क्षमावान् भक्षितुं क्षमः ॥**

हे राजन् ! जो मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की इच्छा रखता है उसे अत्यधिक करुण नहीं होना चाहिए। क्योंकि जो क्षमाशील मनुष्य होता है वह तो अपने हाथ पर रखा हुआ भोजन भी खाने में असमर्थ होता है। इस तरह से दुष्ट गीदड़ों के द्वारा धैर्य बंधाने पर शेर अपने आसन पर बैठा है और दोनों गीदड़ जय-जयकार करने लगते हैं - **“विजयतां महाराजः शुभमस्तु सर्वजगताम्”**

“महाराज की जय हो ! जय-जयकार हो ! सम्पूर्ण संसार का कल्याण हो।”

### 10.8.3 विग्रह

हितोपदेश के इस प्रकरण में पक्षियों के दो राजाओं के मध्य विग्रह यानि युद्ध, कूटनीति और जासूसी से सम्बन्धित रणनीतियों का प्रदर्शन किया गया है। राजहंस हिरण्यगर्भ और चित्रवर्ण नामक मयूर राजा के मध्य विग्रह होता है। इस सन्दर्भ में वर्णन किया गया है-

**हंसैः सह मयूराणां विग्रहे तुल्यविक्रमे ।**

**विश्वास्य वंचिता हंसा काकैः स्थित्वाऽरि मंदिरे ॥**

मयूर और हंसों के मध्य युद्ध चलता रहा और कौओं ने शत्रुओं के किलों में निवास कर हंसों के साथ ठगी की। महामन्त्री गिद्ध कहता है - उचित अवसर के बिना युद्ध करना ठीक नहीं है। जब लाभ की निश्चितता हो जाये तभी विग्रह करना चाहिए -

**भूमिमित्रं हिरण्यं च विग्रहस्य फल त्रयम् ।**

**यदैतन्निश्चितं भावि कर्त्तव्यो विग्रहस्तदा ॥**

ये विग्रह के तीन प्रमुख लाभ- राज्य, मैत्री और सुवर्ण होते हैं। जब इन तीनों का फायदा निश्चित हों उसके बाद ही विग्रह (झगड़ा) करना चाहिये। विग्रह की परिस्थितियों के दौरान कौए अत्यन्त गोपनीय ढंग से शत्रु के किले का अग्नि दहन कर डालते हैं। राजहंस हिरण्यगर्भ के मंत्री चकवे ने बताया- एक दूत ने आकर सूचना प्रदान की कि चित्रवर्ण ने मंत्री गिद्ध के सुझाव का अनादर कर उसका निष्कासन कर दिया है। पुनः अपनी भूल में सुधार करते हुए राजा चित्रवर्ण ने गिद्ध को पुनः मंत्री पद पर आसीन कर लिया। मन्त्री गिद्ध ने अपने सैनिकों को पुरस्कृत किया।

स्व-अधिगम

122 पाठ्य सामग्री



राजहंस स्वभाविक रूप से मन्द-मन्द गति से चलता था। उसके सेनानायक सारस को चित्रवर्ण के मुर्गे ने घेर लिया और मुर्गे ने राजहंस के शरीर पर अपने तेज नाखूनों से हमला किया लेकिन सारस ने उसे अपने शरीर में छुपा कर जल में फेंक दिया। अन्त में मुर्गे की चोंच के प्रहार से सारस मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। तत्पश्चात् राजा चित्रवर्ण दुर्ग (किले) में घुस जाता है और वहाँ की तमाम धन-सम्पत्ति को अपने साथ लेकर वह प्रसन्नतापूर्वक साथ अपने खेमे में प्रस्थान कर जाता है।

राजकुमार कहते हैं- “विग्रह सुनकर हम अत्यन्त प्रसन्न हुए”। आचार्य अपना सुभाशीष प्रदान करते हुए कहते हैं-

**विग्रहः करितुरङ्गपत्तिभि-**

**नो कदापि भवतां महीभुजाम्।**

**नीतिमन्त्रपवनैः समाहताः**

**संश्रयन्तु गिरिगह्वरं द्विषः॥**

आप सदृश भूपतियों का घोड़े, हाथी, और पैदल सेना से कभी किसी भी प्रकार का विग्रह न हो और शत्रु डर से पर्वतों की गुफाओं का सहारा लें। अर्थात् युद्ध कभी न हो, लेकिन यदि हो भी तो उसे नीति के आधार पर विजयश्री को प्राप्त किया जाये।

#### 10.8.4 सन्धि

हितोपदेश के इस प्रकरण में सन्धि की महत्ता को बताया गया है। इसके आरम्भिक श्लोक में कहा गया है -

**वृत्ते महति संग्रामे राज्ञो निहितसेनयोः।**

**स्थेयाभ्यां गृध्रचक्राभ्यां वाचा संधिः कृतः क्षणात्॥**

एक भीषण युद्ध के पश्चात् दोनों राजाओं की सेनाएँ बुरी तरह हताहत हुईं। लेकिन मंत्री गिद्ध और चकवे ने पंच बन कर शीघ्र जल्दी ही बातचीत के माध्यम से संधि करवा दी। जब राजहंस ने अपने मंत्री चकवे से आग लगाने वाले के विषय में जानकारी माँगी तो अत्यन्त नैराश्यपूर्ण भाव से चकवे ने कहा – राजन्! दुर्ग में आग लगाने वाला कौआ गायब हो गया है और उसके सगे-सम्बन्धी परिवार आदि के विषय में कोई जानकारी नहीं मिली है। वास्तविक रूप से वह कौआ शत्रु का जासूस (खूफिया) था और उसके कारण हमारी सेना को हार का सामना करना पड़ा। तब तक राजदूत बगुला कहता है- हे महाराज! मैंने पहले ही कह दिया था कि दुर्ग

स्व-अधिगम  
पाठ्य सामग्री





टिप्पणी

की सुरक्षा-व्यवस्था और निगरानी हर समय रखना अनिवार्य है। लेकिन दुर्ग की सुरक्षा तथा जाँच पड़ताल में घोर लापरवाही हुई है और उसी का यह परिणाम है- **“दुर्गदाहो मेघवर्णेन वायसेन गृधप्रयुक्तेन कृतम्।”**

अर्थात् मंत्री गिद्ध के इशारे पर हमारे दुर्ग में मेघवर्णीय कौवे ने आग लगाई थी। राजा ने लम्बी और गहरी सांस लेकर कहा -

**प्रणयादुपकाराद्वा यो विश्वसिति शत्रुषु।**

**स सुप्त इव वृक्षाग्रात्पतति प्रतिबुध्यते ॥**

जो मनुष्य प्रेम-स्नेह या उपकार से शत्रुओं के विश्वास को जीत लेता है। वह स्वप्न में सोया हुआ सा वृक्ष के अग्रभाग से गिरकर जाग जाता है अर्थात् कहने का आशय है कि विपत्तियों में पड़कर वास्तविकता को पहचानता है। उधर दूत ने आकर कहा कि यहाँ दुर्ग में आग लगाकर जैसे ही वह कौआ राजा के सम्मुख पहुँचा तो राजा चित्रवर्ण अत्यन्त प्रसन्नचित्त होकर कहने लगे- **“अयमेव मेघवर्णोऽयं कर्पूरद्वीपे अभिषिच्यताम्”**

इस मेघवर्णीय कौआ को यहाँ कर्पूरद्वीप के राजा के पद पर अभिषिक्त किया जाये। महामंत्री गिद्ध कहता है - हे राजन्! यह बिल्कुल भी उचित नहीं है -

**“महतामास्पदे नीचः कदापि न कर्तव्यः”**

निम्न कोटि के प्राणि को प्रतिष्ठित राजपद पर कभी भी अभिषिक्त नहीं करना चाहिए। बल्कि राजहंस से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर उन्हें ही वापस लौटा देना चाहिए। गिद्ध कहता है- राजन्! इस दुर्ग पर विजयश्री आपके सद्प्रयासों से ही नहीं मिली, लेकिन यह प्रताप पूर्णतः आपका ही था। राजा चित्रवर्ण कहता- “हे मन्त्रिगण! यह सभी आपकी कुशल नीति का ही परिणाम था।” तब गिद्ध कहने लगा- हे महाराज, मेरा मानना है कि वर्षा काल प्रारम्भ होने वाला है और स्थिति में हमें स्वदेश लौट जाना चाहिए। हमारी प्रतिष्ठा और सुख इसी में है कि हमको सन्धि कर लेनी चाहिए। हम दुर्ग पर भी विजय पताका लहरा चुके हैं और यश-कीर्ति को भी प्राप्त कर चुके हैं।

राजा चित्रवर्ण कहता है - मंत्री, तुम्हारी बात बिल्कुल सही है, हमें राजा मयूर से शीघ्र से शीघ्र सन्धि कर लेनी चाहिये।

मंत्री गिद्ध राजा के आदेशानुसार सन्धि करने को तत्परता से चला जाता है। तत्पश्चात् गिद्ध और चकवे ने मिलकर दोनों राजाओं मध्य के सन्धि करवा दी। सन्धियों के विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डालते हुए मन्त्री गिद्ध ने कहता है - “यह सन्धियाँ षोडश प्रकार की होती हैं। और उन सभी में ‘कांचन संधि’ सर्वश्रेष्ठ होती है, क्योंकि वह नमने वाली और अटूट होती है”।



**संगतः संधिरेवायं प्रकृष्टत्वात्सुवर्णवत् ।**

**तथाऽन्यै संधिकुशलै कांचनः स उदाहृतः ॥**

‘कांचन संधि’ को संगत-संधि नाम से भी जाना जाता है। यह सन्धि स्वर्ण के समान श्रेष्ठ होती है। राजकुमार कहते हैं- हे गुरुदेव! आपने हमें राजनीति, गोपनीयता, जासूसी और कूटनीति के सिद्धान्तों का ज्ञान प्रदान किया। यह सभी कुछ जानकर और सुनकर हम सभी को अत्यन्त प्रसन्नता हुई है।

आचार्य विष्णु शर्मा कहते हैं- समस्त विजयीश्री प्राप्त राजाओं के लिये सन्धि हमेशा प्रसन्नता देने वाली हो, साधु और सज्जन मनुष्य विपदा-रहित हों और सुकृत वालों का यश सदैव विस्तृत होता रहें।

नारायण पण्डित विरचित हितोपदेश में कथा भाग का प्रतिपादन गद्य में किया गया है तथा उससे प्राप्त होने वाली शिक्षा को पद्य में लिखा गया है। ग्रन्थ की भाषा अत्यन्त सरल एवं सरस है। लेखक का उद्देश्य बालकों के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ नीति को सिखाना रहा है।

भारतवर्ष में पञ्चतन्त्र की तुलना में हितोपदेश ग्रन्थ अत्यधिक लोकप्रिय रहा। इसका अनुवाद अनेकों भाषाओं में हो चुका है।

#### बोध-प्रश्न

1. पञ्चतन्त्र के लेखक कौन हैं?
2. पञ्चतन्त्र में कितने तन्त्र हैं?
3. हितोपदेश किसकी रचना है?
4. पञ्चतन्त्र के प्रथम तन्त्र का नाम लिखिए ।
5. पञ्चतन्त्र के द्वितीय तन्त्र का नाम क्या है?
6. ककोलूकीय प्रकरण का सम्बन्ध किस ग्रन्थ से है?
7. लब्धप्रणाश में बन्दर का नाम क्या है?
8. अपरीक्षितकारक तन्त्र किस ग्रन्थ में प्राप्त होता है?
9. क्षपणक कथा का उल्लेख किस तन्त्र में मिलता है?
10. मित्रसम्प्राप्ति नामक प्रकरण का सम्बद्ध किस ग्रन्थ से है?



टिप्पणी

## 10.9 सारांश

कथा-कहानियों के माध्यम से अत्यन्त रोचकता के साथ विषय और उसकी शिक्षा का प्रतिपादन सरलता से हो जाता है। आचार्य विष्णु शर्मा ने राजकुमारों को अल्प समय में ही नीति-निपुण बना दिया था। अल्पमति वाला भी उसके भाव को आसानी से समझ सकता है। पञ्चतन्त्र के पाँच तंत्र - मित्रभेद, मित्र सम्प्राप्ति, काकोलूकीयं, लब्धप्रणाश, अपरीक्षितकारक में सर्वत्र प्रकृति प्रदत्त जीव-जन्तुओं यथा- कौआ, हिरण, मूषक आदि को आधार बनाकर उनके क्रियाकलापों के माध्यम से सुन्दर नीतिपरक शिक्षा प्रदान की जाती है। नारायण पण्डित विरचित हितोपदेश ग्रन्थ भी अपने चार भागों 1. मित्रलाभ 2. सुहृद्भेद 3. विग्रह तथा 4. सन्धि में नीति, धर्म का उपदेश प्रदान करता है। छोटे बच्चों के कोमल हृदय और बुद्धि पर नीति परक छोटी कहानियों के माध्यम मिलने वाली शिक्षा का गहरा प्रभाव पड़ता है। जिससे वह एक सभ्य, सुशिक्षित और मानवीय गुणों से युक्त नागरिक बन सकें।

कथा-कहानियों के माध्यम से मानवीय गुणों, सामाजिक, नैतिकगुणों का विकास होता है और मनुष्य में मनुष्यत्व की भावना का जागरण होता है।

## 10.10 कठिन शब्दावली

- अटूट – जो कभी न टूटे
- कोटि – प्रकार
- सर्वांगीण – सभी तरह से
- पथ – रास्ता
- विपत्ति – परेशानी
- बोध – ज्ञान
- मर्यादारहित – आचारणहीन
- सुबोध – सुगम
- सुहृत् – मित्र
- मेघ – बादल



- प्राचीन – पुरातन
- सरिता – नदी
- ग्रीष्म – गर्मी
- मनोहारी – हृदय को रुचिकर
- समकक्ष – समानान्तर
- सदृश – समान

### 10.11 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. विष्णु शर्मा
2. पाँच
3. नारायण पण्डित
4. मित्रभेद
5. मित्रसम्प्राप्ति
6. पञ्चतन्त्र
7. रक्तमुख
8. पञ्चतन्त्र
9. अपरीक्षित कारक
10. पञ्चतन्त्र

### 10.12 अभ्यास प्रश्न

1. पञ्चतन्त्र का सामान्य परिचय लिखिए।
2. हितोपदेश के नैतिक मूल्यों को विस्तार से लिखिए।
3. पंचतंत्र की भाषा शैली के विषय में बताइए।



टिप्पणी

4. हितोपदेश की विषय वस्तु का विवेचन कीजिए।
5. पञ्चतन्त्र के तन्त्रों की विषय वस्तु का विस्तार में वर्णन कीजिए।

### 10.13 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, श्रीविष्णुशर्माप्रणीत, व्याख्याकार-पाण्डेय, श्रीश्यामाचरण, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, दिल्ली, प्रथम संस्करण: वाराणसी, 1975 ।
- हितोपदेश, श्रीनारायणपण्डितविरचित, सम्पादक-प्रो. बालशास्त्री, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण, 2015 ।
- हितोपदेश, पण्डित जीवानन्द विद्यासागर, सरस्वती प्रेस कलकत्ता ।
- पञ्चतन्त्रम्, श्यामाचरण पाण्डेय (व्या.), विष्णु शर्मा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1975 ।
- M.R. Kale, *Pancatantram* (ed. and trans.), Motilal Banarasidass, Delhi 1999.
- Chandra Rajan, *Pancatantram* (trans.) Penguin Classics, Penguin Books.

### 10.14 सहायक और उपयोगी सामग्री

- रमाशंकर त्रिपाठी, *संस्कृत साहित्य का प्रामाणिक इतिहास*, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।
- उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी।
- बलदेव उपाध्याय, *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, शारदा निकेतन, वाराणसी।
- *A Collection of Ancient Hindu Tales* (ed.) Franklin Edgerton, Johannes Hertel, 1908.
- Krishnamachariar, *History of Classical Sanskrit Literature*, MLBD, Delhi.
- Dasgupta S.N., *A History of Sanskrit Literature: Classical Period*, University of Calcutta, 1977.
- A.B. Keith, *History of Sanskrit Literature* (हिन्दी अनुवाद, मंगलदेव शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली)।

स्व-अधिगम

128 पाठ्य सामग्री



## नीति साहित्य- कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वात्रिंशिका, पुरुषपरीक्षा

श्री विष्णु प्रसाद सेमवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर

मुक्त शिक्षा विद्यालय

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

### संरचना

- 11.1 अधिगम के उद्देश्य
- 11.2 प्रस्तावना
- 11.3 नीति कथा साहित्य का उद्देश्य
- 11.4 वेतालपञ्चविंशतिका
- 11.5 कथासरित्सागर
- 11.6 सिंहासनद्वात्रिंशिका
- 11.7 पुरुषपरीक्षा
- 11.8 सारांश
- 11.9 कठिन शब्दावली
- 11.10 बोध-प्रश्नों के उत्तर
- 11.11 अभ्यास प्रश्न
- 11.12 सन्दर्भ-ग्रन्थ
- 11.13 सहायक अध्ययनसामग्री

### 11.1 अधिगम के उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन के पश्चात् आप-

- नीति साहित्य से परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- कथा काव्य की परम्परा को जानेंगे ।
- कथासरित्सागर का अवबोधन करेंगे ।
- वेतालपञ्चविंशतिका ग्रन्थ के विषय में जानेंगे।



टिप्पणी

- सिंहासनद्वित्रिशिका से अवगत होंगे।
- पुरुषपरीक्षा ग्रन्थ के विषय में जानेंगे।

## 11.2 प्रस्तावना

किसी भाषा की समृद्धि उसके साहित्य से ही परिलक्षित होती है। संस्कृत भाषा में साहित्य का विशाल भण्डार उसके ज्ञान-विज्ञान का द्योतक हैं। साहित्य का उद्देश्य होता है सभी के हित की भावना। मनुष्य के जीवन को उत्कृष्ट बनाने और उसमें विविध सद्गुणों, सद्दिचारों के प्रतिपादन में संस्कृत कथा साहित्य की विशेष भूमिका है। कथा साहित्य में विविध लघु-लघु कथा-कहानियों के द्वारा जीवनमूल्यों की शिक्षा दी जाती है। कहानियों का स्तर अत्यन्त सामान्य और सरल, सहज होता है जिसे प्रत्येक व्यक्ति आसानी से अवबोधन कर सकता है। कम समय में और सरलता से श्रेष्ठतम मानव जीवन का निर्माण ही इनका प्रमुख उद्देश्य होता है।

प्रस्तुत पाठ के माध्यम से हम कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वित्रिशिका, पुरुषपरीक्षा कथा साहित्य ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन और उनका परिचय एवं विषयवस्तु के सम्बन्ध में जानेंगे।

## 11.3 नीति कथा साहित्य का उद्देश्य

ज्ञान के सम्प्रसारण के लिए भिन्न-भिन्न शैलियाँ हैं – यथा- भाषण, पाठ-आवृत्ति, आदि। शिक्षा को सर्वग्राही बनाने के लिए शिक्षण में रोचकता होना अनिवार्य है। क्योंकि रुचिकर होने पर उस वस्तु का ग्रहण स्वयं ही सरलता से हो जाता है।

मानव में नैतिक, राजनीति, कूटनीति, धर्मनीति, व्यवहारिक नीति तथा सद्भावना, सद्दिचार से युक्त गुणों के विकास के लिए शिक्षा की परम आवश्यकता है। इन गुणों का समावेश सभी के अन्दर हो इसके लिए सर्वसाधारण को ध्यान में रखते हुए सरल-सरस शिक्षा की पद्धति की आवश्यकता है। सर्व जन हित के लिए हमारे राष्ट्र के मनीषियों ने कथा और नीति साहित्य को विकसित किया। जिससे कम समय में विषय का अवबोधन हो सके।

यहाँ पर हम संस्कृत कथा साहित्य के विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थों कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वित्रिशिका, पुरुषपरीक्षा के मूल्य शिक्षा, नैतिकता, सामाजिकता आदि गुणों के पल्लवन-पुष्पण को जान सकेंगे।



## 11.4 वेतालपञ्चविंशतिका

वेतालपञ्चविंशति एक सुप्रसिद्ध कथा संग्रह है। इसमें पच्चीस कथाओं का अत्यन्त रोचक संग्रह है। कतिपय विद्वानों के मतानुसार वेतालपञ्चविंशति की कथाएँ गुणाढ्य की बृहत्कथा से उद्धृत की गई हैं।

वेतालपञ्चविंशति की कहानियों का वक्ता एक वेताल है और श्रोता राजा विक्रमादित्य है। राजा त्रिविक्रमसेन (कालान्तर में यह विक्रमादित्य नाम से जाने गये) को कोई सिद्ध महापुरुष प्रतिदिन एक रत्नगर्भित फल लाकर देता है क्योंकि वह किसी विशेष कार्य की सिद्धि की प्राप्ति में विक्रमादित्य की सहायता चाहता है।

उस विशेष पुरुष की सिद्धि में सहायता के लिए राजा विक्रम को वृक्ष पर लटकते हुए एक शव को लाना है लेकिन वह शव किसी वेताल के आधिपत्य में है। वह वेताल राजा के चुप रहने पर ही शव को देना चाहता है।

राजा शव को लेकर जैसे ही प्रस्थान करता है, वेताल राजा को अत्यन्त विचित्र प्रकार की कथाएँ सुनाकर अन्त में इस प्रकार के प्रश्न पूछता है कि राजा अपना मौन भंग करने को विवश हो जाता है। इस तरह से ये कहानियाँ अत्यन्त रोचक और रमणीय हैं। इस सम्पूर्ण कथा संग्रह में वेताल के प्रश्न भी अत्यन्त बहुत कौतुहलपूर्ण, विषमता व जटिलता से भरे हैं। लेकिन राजा के उत्तर भी सुन्दर, चातुर्यपूर्ण, तर्कसंगत, सांसारिक अनुभव से युक्त एवं बुद्धिवर्धक हैं। इन कथाओं के मध्य में अनुप्रास अलंकार से सुसज्जित नीति युक्त पद्य भी हैं। इस प्रकार से वह वेताल पच्चीस कथाएँ राजा को सुनाता है।

कहानी की समाप्ति पर वह राजा को उस दुष्ट सिद्धपुरुष के दुष्ट प्रयोजन के विषय में बताता है। यह जानकर राजा उस सिद्धपुरुष का वध कर देता है। ये सभी कहानियाँ, धार्मिक, नैतिक तथा प्रहेलिकाएँ आदि हैं। यह वेतालपञ्चविंशति अत्यन्त प्राचीन कथाओं का संग्रह है। इस कथा संग्रह के दो पश्चात्तर्वी संस्करण प्राप्त होते हैं –

प्रथम संस्करण शिवदास नामक विद्वान् के द्वारा विरचित है जो कि गद्य और पद्यात्मक है। जिसका समय बाहरवीं शताब्दी निश्चित किया गया है। वल्लभदास जी ने भी इसका संक्षिप्त अनुवाद किया जो भारतीय भाषाओं में अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। मंगोल भाषा में भी 'सिद्धिकूर' के रूप इसका रूपांतरण प्राप्त होता है। 'सिद्धिकूर' का अर्थ होता है- अलौकिक शक्तिशाली मृतक। विभिन्न कथाओं में विक्रमादित्य का वर्णन प्राप्त होता है इससे पता चलता है कि वह अत्यन्त पराक्रमी, चरित्रवान् व न्यायप्रिय राजा थे।





टिप्पणी

## 11.5 कथासरित्सागर

संस्कृत कथा साहित्य के अन्तर्गत 'कथासरित्सागर' का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इसके रचनाकार आचार्य सोमदेव हैं। बृहत्कथा का यह सबसे नवीन और विशालतम स्वरूप है। कविरत्न सोमदेव को आचार्य क्षेमेन्द्र तथा राजा अनन्त का समकालीन माना जाता है। इस प्रकार से इनका समय भी ग्यारहवीं शताब्दी ही है। मान्यता है कि इस ग्रन्थ की रचना सोमदेव ने कश्मीर के राजा अनन्त की पत्नी सूर्यवती के मनोविनोद के लिए सन् 1064 ई. से 1081 ई. के मध्य की थी।

कथासरित्सागर संस्कृत कथा साहित्य का शीर्षस्थ ग्रन्थ है। ग्रन्थ अट्ठारह लम्बक और 124 तरङ्गों में विभाजित है। इस सम्पूर्ण ग्रन्थ में 21388 श्लोक हैं। जिनमें से 761 श्लोक बड़े छन्दों में हैं। ग्रन्थ की भाषा सरल, सरस, प्रवाहमय है। शारदा कृपा सम्पन्न आचार्य सोमदेव ने कथा की मूल भावना को बरकरार रखते हुए सम्पूर्ण कथावस्तु को नया स्वरूप प्रदान किया। कविराज कथासरित्सागर की भूमिका में कहते हैं-

**यथामूलं तयेवैतश्च मनागण्यतिक्रमः ।**

**ग्रन्थविस्तरसंक्षेपमात्रं भाषा च भिद्यते ॥**

यहाँ पर ग्रन्थ के मूल स्वरूप को यथावत् रखने की चर्चा की है और साथ ही भाषा आदि के भेद के कारण कुत्रचित् विस्तार या संक्षिप्त हो सकता है। यह सम्पूर्ण ग्रन्थ कथा कहानी रूपी सरिताओं का विशाल समुद्र है, इसीलिए इसको कथासरित्सागर कहा जाता है। इस ग्रन्थ में ऋग्वेद में उल्लिखित आकाश और पृथ्वी के निर्माण सम्बन्धी कथाओं, प्राचीन जीव-जंतुओं की कहानियों, विभिन्न प्रेतों की कहानियों तथा सुन्दर सरस प्रेमयुक्त कहानियों का वर्णन किया गया है। यह सभी लघु-दीर्घ कथाएँ सभी अपने आप में सम्पूर्ण हैं।

भाषा का माधुर्य और प्रवाहमयता अत्यन्त रोचक है। श्लोक सरस, सुन्दर, समासरहित व प्रसादगुण से युक्त है। कतिपय पद्य जटिल भी हैं।

समुद्री तूफान का वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त होते हुए भी अलंकृत व प्रभावयुक्त है-

**अहो वायुरपूर्वोऽयमित्याश्चर्यवशादिव । व्याघूर्णन्ते स्म जलधेस्तटेषु वनराजयः ॥**

**व्यत्यस्ताश्च मुहुर्वातादधरोत्तरतां ययुः । वारिषेर्वारिनिचया भावाः कालक्रमादिव ॥**

आचार्य कविराज सोमदेव कथाओं के माध्यम से रसों की निष्पत्ति में अत्यन्त निपुण हैं। प्रस्तुत पद्य में ग्रीष्म ऋतु की प्रचण्डता का दिव्य वर्णन किया है -



प्रियाविरहसंतप्तपाभ्यनिःश्वासमारुतः ।

त्यस्तोष्माण इवात्युष्णा वान्ति स्म च समोरणाः ॥

शुष्यद्विदीर्णपङ्काश्च हृदयैः स्फुटितैरिव ।

जलाशया ददृशिरै धर्मयुप्ताम्बुदसंपदः ॥

नैतिकता के सन्दर्भ में परोपकार की प्रशंसा करते हुए कहते हैं-

पदार्थफलजन्मानो न स्युर्मार्गदुमा इव ।

तपच्छिदो महान्तश्चेज्जीर्णारण्यं भवेत् ॥

सोमदेव ने विभिन्न सन्दर्भों में सांस्कृतिक समग्रता का वर्णन किया है, सम्पूर्ण भारतीय समाज और उसके ऊँच-नीच के दोनों पक्षों का सजीव व वास्तविक चित्रण किया गया है।

कपटी, चोर, वेश्या, कपटी बदमाश, ठग, पाखण्डी भिक्षु आदि समाज के निचले तबके का सुन्दर वर्णन है।

एक तरफ पतिव्रता स्त्री का भी मनोहारी वर्णन है तो दूसरी ओर स्त्रियों की चरित्रहीनता व मर्यादारहित उच्छृङ्खलता का भी वर्णन प्रस्तुत किया है।

आचार्य सोमदेव काश्मीरी प्रदेश के निवासी थे। कश्मीर की धार्मिकता, सामाजिकता और अन्धविश्वास, जादूगरी, शैवमत, बौद्धमत, कर्मसिद्धान्त, शिलिग और मातृदेवियों की पूजा-अर्चना आदि का वर्णन किया गया है।

कथासरित्सागर नामक ग्रन्थ को बृहत्कथा का ही एक संस्करणरूप में मान्यता है लेकिन स्वतन्त्र रूप में कथासरित्सागर ने अत्यधिक प्रसिद्धि प्राप्त की है। बृहत्कथा के रचनाकार गुणाढ्य उच्चकोटि के कवि थे, उनकी रचना रामायण, महाभारत की भाँति पश्चात्तद्वर्ती रचनाकारों के लिए उपजीव्य बनी। नाटककार भास, हर्ष और भट्टनारायण आदि ने अपनी रचनाओं का कथानक बृहत्कथा से लिया है। सुप्रसिद्ध गद्यकार सुबन्धु, बाणभट्ट और दण्डी ने अपनी रचनाओं में गुणाढ्य का नाम अत्यन्त श्रद्धा के साथ लिया है।

महाकवि बाणभट्ट ने 'बृहत्कथा' को आशुतोष शिव की लीला के सदृश विस्मयकारी कहा है-

समृद्धीपितकन्दर्पा कृतगौरीप्रसाधना ।

हरलीलेव नो कस्य विस्मयाय बृहत्कथा ॥

आचार्य धनञ्जय ने दशरूपक तथा गोवर्धनाचार्य ने आर्यासप्तशती में इसे रामायण महाभारत के समकक्ष माना है-



टिप्पणी

रामायणावि च विभाव्य बृहत्कथां च । (दशरूपक)

तथा-

श्रीरामायण भारत बृहत्कथानां कवीन् नमस्कुर्मः ।

त्रिस्रोता इव सरसा सरस्वती स्फुरति भिन्ना ॥

## 11.6 सिंहासनद्वात्रिंशिका

यह ग्रन्थ विश्व प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्य से सम्बन्धित बत्तीस कथाओं का संकलन है, इसे 'द्वात्रिंशत्पुत्तलिका' या 'विक्रमचरित' नाम से भी जाना जाता है। इस कथा में वर्णन मिलता है कि ग्यारहवीं शताब्दी में धारा नगरी के नरेश भोज को पृथ्वी में गड़ा हुआ एक सिंहासन प्राप्त हुआ जो कि राजाधिराज विक्रमादित्य का था। उस सिंहासन में बत्तीस पुतलियाँ जड़ी हुई थीं। उस विशेष प्रकार के सिंहासन की स्वच्छता आदि के बाद राजा भोज उस सिंहासन पर बैठने को तत्पर हो जाते हैं। तत्क्षण उन पुतलियों ने उन्हें रोककर विक्रमादित्य के न्याय और पराक्रम से सम्बन्धित कथाएँ सुनायीं। सभी बत्तीस पुतलियों ने बत्तीस कथाएँ सुनाकर राजा भोज को उस सिंहासन पर बैठने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया। तत्पश्चात् सभी पुतलियाँ मुक्त हो जाती हैं। वास्तविक रूप में वे 32 पुतलियाँ ही 32 आत्माओं के रूप में थी और जो भी व्यक्ति उन समस्त उदात्त गुणों से युक्त होगा वही उस सिंहासन बैठने का अधिकारी होगा। इस तरह से राजा भोज उस सिंहासन पर आसीन नहीं हो पाते हैं। 'सिंहासनद्वात्रिंशिका' ग्रन्थ के रचनाकार से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त नहीं होती है। हालाँकि यह रचना ग्यारहवीं शताब्दी ई० के बाद की है। क्योंकि इसमें सर्वत्र राजा भोज का वर्णन प्राप्त होता है।

इस ग्रन्थ के उत्तरी तथा दक्षिणी दो संस्करण भी मिलते हैं-

1. जिसमें उत्तरी संस्करण के भी तीन संस्करण हैं- चौदहवीं शताब्दी के जैनकवि क्षेमकर विरचित संस्करण गद्यात्मक और पद्यात्मक है तथा अन्य गद्य-पद्य-मिश्रित संस्करण है।
2. दक्षिणी संस्करण- दक्षिण भारत में यह ग्रन्थ 'विक्रमार्कचरित' के नाम से अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसका संस्करण अंग्रेजी अनुवाद के साथ दो भागों में सन् 1926 ई. में इजर्टन ने हार्वर्ड ओरियंटल सीरिज से प्रकाशित किया है। सम्पादक ने इस संस्करण को ही मौलिक ग्रन्थकी प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया है।

स्व-अधिगम

134 पाठ्य सामग्री



### विक्रमादित्य के गुणों का वर्णन से सम्बन्धित अन्य ग्रन्थ-

1. अनन्तकृत वीरचरित (30 सर्ग)
2. शिवदास-कृत शालिवाहनकथा (गद्य युक्त 18 सर्ग)
3. आनन्द-रचित माधवानलकथा (संस्कृत-प्राकृत पद्यों से युक्त, गद्य में),
4. विक्रमोदय (लेखक अज्ञात),
5. पञ्चदण्डच्छत्र-प्रबन्ध (पन्द्रहवीं शताब्दी ई०, जैन लेखक)।

## 11.7 पुरुषपरीक्षा

कथा साहित्य के अन्तर्गत लोक कथा में मैथिली कवि विद्यापति का विशेष स्थान है, इनका समय पन्द्रहवीं शताब्दी है। इनका सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'पुरुषपरीक्षा' है जो कि मूल रूप में मैथिली भाषा में है। इसमें 44 नैतिक और राजनैतिक कहानियाँ हैं। इस ग्रन्थ का अनुवाद गुजराती, अंग्रेजी, बंगला, हिन्दी आदि अनेक भाषाओं में प्रकाशित हो चुका है।

इस ग्रन्थ की प्रमुख कथावस्तु एक राजा से सम्बन्धित है – वह अपनी पुत्री के पाणिग्रहण संस्कार के लिए किसी योग्य वर के सम्बन्ध में एक ब्राह्मण से पूछते हैं। वह ब्राह्मण अनेक प्रकार के सज्जन-दुर्जन पुरुषों की कथाएँ सुनाता है जिनमें दानवीर, दयावीर, युद्धवीर, सत्यवीर, चोर, भीरु, लोभी, अकर्मण्य आदि नाना प्रकार के हैं। प्रत्येक कथा में पुरुष-विशेष का ही निरूपण किया गया है। इस तरह से सभी प्रकार के पुरुषों की कथाओं के माध्यम से राजा को वर का चयन करने का उपदेश प्रदान किया गया है।

### बोध-प्रश्न

1. कथासरित्सागर में कितने लम्बक हैं?
2. विक्रमोदय में किसके गुणों का वर्णन है?
3. पुरुष परीक्षा ग्रन्थ मूल रूप से किस भाषा में है?
4. कथासरित्सागर के प्रणेता कौन हैं?
5. वेतालपञ्चविंशतिका ग्रन्थ में कितनी कथाएँ हैं?
6. सिंहासनद्वात्रिंशिका ग्रन्थ में सिंहासन में कितनी पुतलियाँ जड़ी हुई थीं?



टिप्पणी

7. धारा नगरी के राजा भोज का संबंध किस ग्रन्थ से है?
8. पुरुषपरीक्षा किसकी रचना है?
9. पुरुष परीक्षा किस भाषा में रचित है?
10. कवि विद्यापति किस शताब्दी में हुए थे?

### 11.8 सारांश

भारत की साहित्यिक परम्परा अत्यन्त विशाल और समृद्ध है। संस्कृत भाषा और उसके साहित्य को तो भारतवर्ष की आत्मा कहा जाता है। यहाँ का साहित्य मानवीय उच्च आदर्शों पर आधारित है सदैव मानव के उत्कर्ष के लिए तत्पर है। रामायण, महाभारत, श्रीमद्भगवद् गीता हमारी अस्मिता है। कथा साहित्य के कथासरित्सागर, वेतालपञ्चविंशतिका, सिंहासनद्वात्रिंशिका, पुरुषपरीक्षा ग्रन्थ अत्यन्त सरलता से कथा-कहानियों के द्वारा रोचकता के साथ मानवीय मूल्यों की शिक्षा प्रदान करते हैं।

मानव को मानवीयगुणों से युक्त करने, सभ्य, सुशिक्षित नागरिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण करते हैं। सुकोमल मन और मेधा वाले बालकों के हृदय पर कथा-कहानियों से प्रभाव पड़ता है। मनुष्य सामाजिक, नैतिक, मानवीय सद्भावों, विचारों से युक्त हो यह नीति कथा साहित्य का परम लक्ष्य है।

### 11.9 कठिन शब्दावली

- जटिल – कठिन
- माधुर्य – मधुरता
- सर्वग्राही – सभी के लिए ग्रहणीय
- शिल्प – बनावट
- शैली – तरीका
- परिलक्षित – दिखाई देना



- हित – उपकार
- विविध – बनावट
- द्योतक – प्रतिपादक
- बोध – ज्ञान

### 11.10 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. अट्टारह
2. विक्रमादित्य
3. मैथिली
4. सोमदेव
5. पच्चीस
6. बत्तीस
7. सिंहासनद्वात्रिंशिका
8. विद्यापति
9. मैथिली
10. पंद्रहवीं

### 11.11 अभ्यास प्रश्न

1. नीति साहित्य की आवश्यकता क्यों है ?
2. कथा साहित्य से नैतिक मूल्यों का विकास कैसे होता है?
3. कथासरित्सागर की विषयवस्तु को समझाइए ।
4. वेतालपञ्चविंशतिका का परिचय लिखिए ।
5. सिंहासनद्वात्रिंशिका का संक्षिप्त परिचय लिखिए ।



टिप्पणी

### 11.12 सन्दर्भ-ग्रन्थ

- पञ्चतन्त्रम्, श्रीविष्णुशर्माप्रणीत, व्याख्याकार-पाण्डेय, श्रीश्यामाचरण, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, दिल्ली, प्रथम संस्करणः वाराणसी, 1975 ।
- हितोपदेश, श्रीनारायणपण्डितविरचित, सम्पादक-प्रो. बालशास्त्री, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण, 2015 ।
- हितोपदेश, पण्डित जीवानन्द विद्यासागर, सरस्वती प्रेस कलकत्ता ।
- पञ्चतन्त्रम्, श्यामाचरण पाण्डेय (व्या.), विष्णु शर्मा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1975 ।
- M.R. Kale, *Pancatantram* (ed. and trans.), Motilal Banarasidass, Delhi 1999
- Chandra Rajan, *Pancatantram* (trans.) Penguin Classics, Penguin Books.

### 11.13 सहायक अध्ययनसामग्री

- रमाशंकर त्रिपाठी, *संस्कृत साहित्य का प्रामाणिक इतिहास*, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।
- उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी।
- बलदेव उपाध्याय, *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, शारदा निकेतन, वाराणसी।
- *A Collection of Ancient Hindu Tales* (ed.) Franklin Edgerton, Johannes Hertel, 1908.
- Krishnamachariar, *History of Classical Sanskrit Literature*, MLBD, Delhi.
- Dasgupta S.N., *A History of Sanskrit Literature: Classical Period*, University of Calcutta, 1977.
- A.B. Keith, *History of Sanskrit Literature* (हिन्दी अनुवाद, मंगलदेव शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली).

स्व-अधिगम

138 पाठ्य सामग्री

[illegible]



## This image shows a full page of blank white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and run across the width of the page, providing a template for writing or drawing. There are no margins, text, or other markings present.



दूरस्थ एवं सतत शिक्षा विभाग  
मुक्त शिक्षा परिसर, मुक्त शिक्षा विद्यालय  
दिल्ली विश्वविद्यालय